देस हरियाणा

ISSN : 2454-6874
साहित्यिक-सांस्कृतिक अभिव्यक्ति का मंच
अंक 51 मार्च-अप्रैल 2024

संपादक	सुभाष सैनी
सम्पादन सहयोग	जयपाल, अरुण कैहरबा, राजकुमार जांगड़ा, विकास साल्याण गगनदीप सिंह
सलाहकार	प्रो. टी.आर. कुंडू, सुरेन्द्रपाल सिंह, परमानंद शास्त्री, अशोक भाटिया, सत्यवीर नाहड़िया
प्रबंधन	कीर्ति सैनी, योगेश शर्मा, गुरदीप भोंसले
प्रकाशक	सत्यशोधक फाउंडेशन, 912 सैक्टर-13, कुरुक्षेत्र हरियाणा
संपर्क	सुभाष चंद्र - 94164-82156
Email	haryanades@gmail.com
Website	desharyana.in
सहयोग राशि	एक प्रति ₹ 50 मात्र
व्यक्तिगत:	₹300 (वार्षिक) संस्था:₹500 (वार्षिक) (पंजीकृत डाक खर्च समेत)
आजीवन:	₹5000 संरक्षक: ₹10000

ऑनलाईन भुगतान के लिए

Account Name	Satyashodhak Foundation
Bank Name	Indian Bank, Sector -13
Account No.	50490177180
IFSC:	IDIB000K849

प्रकाशित रचनाओं में प्रस्तुत विचार एवं दृष्टिकोण से सम्पादक का सहमत होना आवश्यक नहीं।
सम्पादक एवं संचालन अव्यवसायिक एवं अवैतनिक, समस्त कानूनी विवादों का न्याय-क्षेत्र कुरुक्षेत्र न्यायालय होगा।
स्वामी-प्रकाशक-मुद्रक सत्यशोधक फाउंडेशन, 912, सैक्टर-13, कुरुक्षेत्र हरियाण

इबकी बार

- **दो हरफी बात**

रचनाकार पेशेवराना दायित्व निभायेंगे **3**

- **आलेख**

सुभाष सैनी - गीता प्रेस, गोरखपुर की स्त्री-विरोधी मुहिम **5**
सावित्रीबाई फुले ने दी थी पति को मुखाग्नि 22

- **हिंद के सितारे**

अमरनाथ - मौलाना अबुल कलाम आजाद हिन्दूस्तानियत की मिशाल **23**

- **कहानी**

गंगा राम राजी - सरफरोश **31**

- **कविताएं**

जयपाल, विनोद कुमार, योगेश, साहिब सिंह

- **विरासत**

जवहार लाल नेहरू - धर्म क्या है? **43**
सन्तराम बी.ए. - डॉक्टर आंबेडकर से मेरी भेंट **44**

- **पठनीय पुस्तक**

रानी वत्स - प्रोफ़ेसर की डायरी **50**

- **दस्तावेज**

आइंस्टीन के पत्र - अनुवाद – संजय कुंदन **52**

- **लोकधारा**

जीवन सिंह - मेवाती शायर सादल्ला **55**

- **गतिविधियां**

गुरु रविदास जयंती **57**
पानीपत में माता सावित्री बाई फुले की पुण्यतिथि पर चेतना उत्सव **58**
सावित्रीबाई फुले पुण्यतिथि पर परिचर्चा **58**
जयपाल - हरियाणा लेखक मंच का वार्षिक सम्मेलन संपन्न **59**
प्रो.राजीव चंद्र शर्मा - गोरी हिरणी-उपन्यास पर परिचर्चा **62**

कवर चित्र – अशोक भौमिक

रचनाकार पेशेवराना दायित्व निभायेंगे

> अपनी राहों में अंधेरा तो यक़ीनन है मगर,
> ये अंधेरे पार कर लो, रोशनी मिल जाएगी।
> - बलबीर राठी

सन् 2024 में 18वीं लोकसभा के लिए चुनाव होंगे। पूरा देश अपनी पसंद की सरकार चुनने की चुनावी प्रक्रिया में व्यस्त होगा। देश भर के राजनीतिक दल जनता के समक्ष वायदे करेंगे। हमेशा की तरह जिनमें कुछ सच्चाइयां भी होंगी और जुमलेबाजी तो होगी ही। कितनी गर्द-गुबार उड़ेगी, कितने वायदे होंगे, कितनी गारंटियां होगी, कितने नारे और कितने प्रचार और इन सब में कितना दम होगा ये देखा जाएगा। लोगों के अंदर जाति और धर्म के आधार पर तलवारें खींचने के लिए धार्मिक कट्टरपंथी पार्टियां जोर मारेंगी।

लोकतंत्र के उत्सव में लोग बाबा साहेब भीम राव अंबेडकर द्वारा संविधान में बिना किसी आर्थिक, राजनीतिक, लैंगिक, जातीय, धार्मिक भेदभाव के वोट के समान अधिकार का इस्तेमाल करेंगे। लोकतंत्र में जनता अपनी इसी राजनीतिक ताकत के हथियार से निरंकुश सत्ता पर लगाम लगाती है।

पिछले कई सालों से संविधान के मूल ढांचे पर गरमा-गरम व गंभीर चर्चा हो रही है। जहां अनेक वर्ग और उनके संगठन संविधान बचाओ-देश बचाओ की तख्तियां लेकर सड़कों पर दिखाई दे रहे हैं, वहीं सत्ताधारी पार्टियों के नेता और नुमाइंदे संविधान बदलने की बात करते हुए भी सुनाई दिये। संविधान को लेकर जितना वैचारिक चिंतन, उद्वेलन, आंदोलन, परिचर्चाएं, आशंकाएं, वर्तमान में हैं शायद ही पहले कभी रही हों। इससे लगता है कि 2024 का चुनाव का मुख्य मुद्दे संविधान और संवैधानिक अधिकारों के इर्द-गिर्द ही होगा।

संविधान प्रदत्त बुनियादी अधिकार शिक्षा, स्वास्थ्य, समान अवसर, सामाजिक सम्मान, गरिमा, स्वतंत्रता, समता, भाईचारा, धर्मनिरपेक्षता, समाजवाद, भागीदारी के जो वायदे किए गए हैं, उसके बरक्स घोर गरीबी, बदहाली, महंगाई, बेरोजगारी, घोर विषमता, ऊंच-नीच, जात-पात, धार्मिक-संकीर्णता-कट्टरता अपनी चरमसीमा पर है। मानव विकास के समस्त संकेतकों में देश पिछड़ता जा रहा है और देश की खनिज संपदा, धन-दौलत, जल- जंगल-जमीन कुछ हाथों में सिमटती जा रही है। इसके प्रति आक्रोश और बेचैनी सड़कों के विभिन्न किस्म के आंदोलनों में, उनको एकजुट करते नारों में दिखाई पड़ जाती है। ऐसे माहौल में जब पालेबंदी स्पष्ट तौर पर हो रही हो तो चुनाव भी दिलचस्प होगा ही।

इसी दौरान आजादी के बाद देश की धन दौलत, संपत्तियों, नौकरियों, प्रशासन, मीडिया, न्यायपालिका, शिक्षण संस्थानों में दलित, आदिवासियों और पिछड़ी जातियों की भागीदारी का मुद्दा भी जोर शोर के साथ सुनाई देने लगा है। एक तरफ देश में लोगों का रेला राम मंदिर के उद्घाटन का साक्षी बन रहा है, तो दूसरी तरफ शांति से दिल्ली की तरफ कूच कर रहे किसानों पर हरियाणा की सीमाओं पर ड्रोन से बम बरसाए जा रहे हैं। आम जनमानस ही नहीं नागरिक समाज बुद्धिजीवी, साहित्यकार, कलाकार वे भी स्वतंत्र तौर पर कार्य करने में असमर्थ पा रहे हैं। एक अदृश्य डर उनको सताए जा रहा है।

चुनाव लोकतंत्र की प्रक्रिया का महत्वपूर्ण अंग है। लोकतंत्र में प्रक्रियात्मक अंग ही मुख्य रूप से सक्रिय है परंतु ये बात रेखांकित करने योग्य है कि लोकतंत्र के सार में जरूर गिरावट आई है। संवैधानिक संस्थाओं को दरकिनार करके अपनी मनमर्जी चलाई जा रही है।

देश में हुए किसान आंदोलन के दोनों चरणों ने भारतीय जनता और खासकर उत्तर भारत की जनता की चेतना को जिस तरह से प्रभावित किया है उसका असर भी आने वाले चुनाव में दिखाई देगा आमतौर पर साधारण लोगों की बुद्धिमत्ता और उनके निर्णयों की समझदारी पर शक किया जाता है, लेकिन भारत का जन सामान्य हमेशा ही परिपक्वता का परिचय देता रहा है। राजनीतिक दलों के जीत के दावों, मीडिया के शोर-शराबे व चुनावी-पंडितों के कयासों को दरकिनार करते हुए जनता ने अप्रत्याशित और चमत्कारिक परिणाम दिये हैं।

चुनाव सिर्फ राजनीतिक दलों के बीच की लड़ाई नहीं है, बल्कि सरकार चुनने के व्यापक असर होने हैं ऐसे में रचनाकार अपनी सकारात्मक भूमिका से पीछे नहीं हट सकते। देश के हित में प्रगतिशील शक्तियों की जनता को पहचान करवाना व जागरूक करना उनका दायित्व बनता है। उम्मीद है कि रचनाकार तटस्थता का ढोंग न करके अपना पेशेवराना दायित्व निभायेंगे।

- सुभाष सैनी

गीता प्रेस, गोरखपुर की स्त्री-विरोधी मुहिम

सुभाष सैनी

> किसी नारी ने आज तक यदि किसी धर्म किताब की रचना की होती तो पुरुषों द्वारा सभी नारियों के अधिकारों के बारे में आपत्ति करके अपने पुरुष जाति के अधिकारों के बारे में वे बकवास न करते। क्योंकि नारियां यदि ग्रंथ लिखने योग्य होतीं तो पुरुषों ने इस तरह से उनका शोषण करके भेदभाव किया ही नहीं होता। - जोतिबा फुले

गीता प्रैस गोरखपुर की पुस्तकें बस अड्डों और रेलवे स्टेशनों के स्टाल पर बिकती हुई मिल जायेंगीं। इन पुस्तकों की दो विशेषताएं हैं एक तो ये इतनी सस्ती हैं कि लागत कीमत से भी कम में बेची जाती हैं। दूसरे, इसकी विशेषता है कि इस प्रकाशन से छपी पुस्तकों को धार्मिक माना जाता है। प्रकाशन के संचालक भी इसे धार्मिक साहित्य के तौर पर ही प्रस्तुत करते हैं, इसलिए इसके शीर्षक भी इसी तरह के रखे जाते हैं कि वे प्रथमत: धार्मिक दिखाई दें, यद्यपि यह किसी भी दृष्टि से धार्मिक साहित्य नहीं होता ।धर्म की आड़ में ये समाज में निहायत पिछड़ापन,रूढिवादिता,अंधिवश्वास व अमानवीयता को प्रसारित कर रही है। इसको धर्म का आवरण इसलिए ही दिया जाता है कि लोगों की धर्म में आस्था होती है उसके आधार पर इसमें दी गई घोर मानव विरोधी सामग्री भी स्वीकार्य बनाई जा सकती है।

इस प्रकाशन ने समाज के विभिन्न वर्गों को ध्यान में रखते हुए विशेष सामग्री तैयार की है। बच्चों के लिए तथा स्त्रियों के लिए विशेष आचार-संहिता पेश की है, जो किसी भी तरह से धार्मिक तो है ही नहीं, बल्कि इन वर्गों के खिलाफ है। स्त्रियां कुल आबादी का आधा

हिस्सा हैं, जो अन्य अन्य कारणों से कम हो रही हैं। भारतीय समाज में आधुनिकता की जब शुरूआत हुई और आधुनिक विचारों को ग्रहण किया जाने लगा तो सबसे पहले स्त्री से जुड़े सवालों को ही समाज सुधारकों ने उठाया। स्त्री से जुड़े सवालों को पूरे समाज के परिप्रेक्ष्य में रखकर टटोला गया कि उसके प्रति भेदभावपूर्ण रवैये व नजरिये में कितनी अमानवीयता छुपी हुई है। जो क्रूर व बर्बर परम्पराएं-प्रथाएं-मान्यताएं दिखाई दीं उनके खिलाफ संघर्ष छेड़कर समाज में नवजागरण की जमीन तैयार की, इस कार्य में सैंकड़ों संस्थाओं और व्यक्तियों ने योगदान दिया। फिर चाहे राजाराम मोहनराय हों, ईश्वरचन्द्र विद्यासागर हों, देवेन्द्रनाथ ठाकुर हों, जोतिबा फुले हों, सावित्री बाई फुले हों, स्वामी दयानन्द हों या भीमराव आम्बेडकर हों सभी ने दकियानूसी व अमानवीय प्रथाओं के खिलाफ मुहिम चलाई। सती-प्रथा, पर्दा-प्रथा, बाल-विवाह, विधवा-विवाह, स्त्री-शिक्षा व स्त्री-स्वतंत्रता जैसे तमाम सवालों पर समाज में बहस चली और गहन मंथन के बाद इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि जब तक स्त्री और पुरुष के प्रति समान रुख नहीं अपनाया जायेगा, तब तक समाज न तो प्रगति कर सकता है और न ही मानवता की कसौटी पर खरा उतर सकता है। समाज सुधारकों ने इन बुराइयों के विरूद्ध मोर्चा खोल दिया, लेकिन जो लोग सदियों तक दूसरों को अज्ञानी रखकर अपना वर्चस्व स्थापित किए हुए थे उनको यह रास नहीं आया और इसके विरोध में खड़े हुए। इन्होंनें अपने वर्चस्व को बनाए रखने के लिए पुरातनपंथी व रूढिवादी विचारों को पुनर्स्थापित करने के लिए पूरी शक्ति लगा दी। गीता प्रेस, गोरखपुर की पुस्तकों पर एक नजर डालने से ही यह स्पष्ट हो जाता है कि यह समाज में पिछड़ेपन, रूढिवादिता, अंधविश्वास, असमानता, अज्ञानता व अवैज्ञानिकता को ही बढावा देना चाहता है और राष्ट्र-विरोधी भी है। यहां इस प्रकाशन द्वारा स्त्रियों के लिए प्रकाशित की गई विशेष सामग्री 'नारी शिक्षा', 'नारी धर्म', 'गृहस्थ में कैसे रहें', 'स्त्री-धर्म प्रश्नोतरी', 'दाम्पत्य जीवन का आदर्श' आदि पुस्तकों पर ही चर्चा करेंगें।

नारी-शिक्षा

'प्राय: सभी धार्मिक तथा विद्वान् महानुभावों का यह मत है कि वर्तमान धर्महीन शिक्षा-प्रणाली हिन्दू-नारियों के आदर्श के सर्वथा प्रतिकूल है, फिर जवान लड़के-लड़कियों का एक साथ पढ़ना तो और भी अधिक हानिकर है। इस सहशिक्षा का भीषण परिणाम प्रत्यक्ष देखने पर भी मोहवश आज उसी मार्ग पर चलने का आग्रह किया जा रहा है।' (नारी शिक्षा-पृष्ठ82)

"पहले 'समान शिक्षा' पर कुछ विचार करें। शिक्षा का साधारण उद्देश्य है मनुष्य के अन्दर छिपी हुई पवित्र तथा अभ्युदयकारिणी शक्तियों का उचित विकास करना। परन्तु क्या पुरुष और स्त्री में शक्ति एक सी है? क्या पुरुष और स्त्री की शक्ति के विकास करने की आवश्यकता है? गहराई से विचार करने पर स्पष्ट उतर मिलता है 'नहीं'। दोनों की शरीर रचना

में भेद है, दोनों के हृदयों में भेद है और दोनों के कर्मक्षेत्र भी विभिन्न हैं। अत: इस भेद को ध्यान में रखकर ही शिक्षा की व्यवस्था करनी चाहिए। इस प्रकृति-वैचित्रय को मिटाकर आज हम प्रमादवश स्त्री-पुरुष को सभी कार्यों में समान देखना चाहते हैं।'' (नारी शिक्षा -पृ. 83)

“आज की युनिवर्सिटियों की शिक्षा ने नारी जाति के लिए निरर्थक ही नहीं वरं अत्यन्त हानिकर है। जो शिक्षा स्त्रियों के स्वाभाविक गुण मातृत्व, सतीत्व, सदगृहिणीपन, शिष्टाचार और स्त्रियोचित हार्दिक उपयोगी सौन्दर्य-माधुर्य को नष्ट कर देती है, उसे उच्च शिक्षा कहना सचमुच बड़े आश्चर्य की बात है।'' (नारी शिक्षा – पृ. 85)

वर्तमान उच्च शिक्षा को स्त्री के स्वाभाविक गुणों को नष्ट करने वाली बताना व इसलिए इससे दूर रहने की सलाह देना तो हास्यास्पद ही है। स्त्री को केवल मातृत्व, सतीत्व, सदगृहिणीपन,शिष्टाचार (सेवा-टहल) जैसे मनघड़ंत गुणों तक सीमित करना उसकी क्षमताओं को न केवल कम करके आंकना है बल्कि उसके वजूद को ही अपमानित करना है। दूसरे, विचार करने की बात है कि जिन गुणों को स्त्री के स्वाभाविक गुण बताकर उनका विकास करने की ‘नेक’ सलाह दी गई है क्या उन गुणों की पुरुष को आवश्यकता नही है? स्त्री और पुरुष में ऊपरी तौर पर जो भिन्नता दिखाई देती है उसके आधार पर स्त्री व पुरुष की क्षमताओं में, प्रतिभा में स्वाभाविक तौर पर अन्तर मान लेना सही नहीं है। महिला और पुरुष में जो जैवकीय भिन्नता है, शारीरिक भिन्नता है वह प्राकृतिक है, लेकिन जो सामाजिक भिन्नता है वह प्राकृतिक नहीं है। वह समाज निर्मित है। पितृसत्ता की व्यवस्था के कारण है।

स्त्री-शिक्षा के खिलाफ यहां तीन पैंतरे लिए गए हैं –

(क) लैंगिक भेद को आधार बनाकर पुरुष के समान शिक्षा न देने का

(ख) नैतिकता की दुहाई देकर सह-शिक्षा न देने की

(ग) कथित धर्म की आड़ लेकर शिक्षा-प्रणाली को ही खारिज करके।

किसी भी समाज, वर्ग व समुदाय की तरक्की में शिक्षा व ज्ञान की महत्त्वपूर्णभूमिका है। स्त्रियों की लगभग आधी आबादी है। आश्चर्य की बात है कि स्वयं को धार्मिकता का चैंपियन कहने वाले इस प्रकाशन ने स्त्रियों को शिक्षा से दूर ही

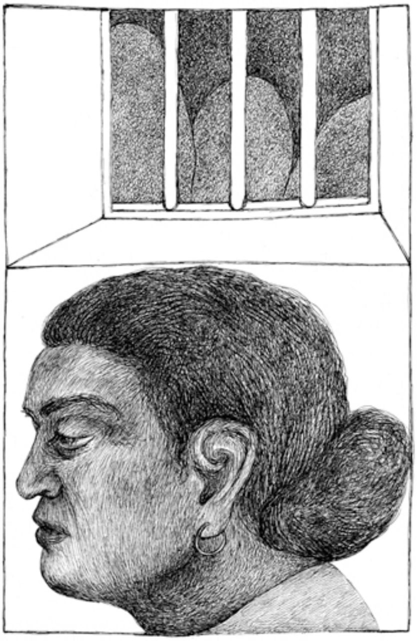

रखने की वकालत की है। वर्तमान शिक्षा को ‘धर्महीन’ करार देकर निषिद्ध करने की साजिश बनाई है।

समाज में गैर बराबरी बनाए रखना ही इस प्रकाशन का मुख्य उद्देश्य लगता है। गैर बराबरी के समाज में उनकी मौज व भला होता है जो समाज के ऊंचे दर्जे पर होते हैं। समाज में असमानता तभी कायम रहती है जब कि हर स्तर पर असमानता व्याप्त रहे। उसको बनाकर रखने के लिए नए नए आधार गढे जाएं। जाति व लिंग के नाम पर कायम की गई असमानता से तो सभी परिचित हैं। असमानता को उचित ठहराने का कोई तार्किक व वैज्ञानिक आधार तो है नहीं, इसलिए असमानता की समर्थक शक्तियां हमेशा प्राकृतिक विषमताओं का हवाला देने की कोशिश करती हैं। वे बड़ी चतुराई से प्राकृतिक विषमताओं को मानव-निर्मित सामाजिक विषमताओं पर थोंपने की कोशिश करते हैं। स्त्री पुरुष के मामले में अलग-अलग क्षमताओं की बात करके अलग-अलग शिक्षा की वकालत करना भी उनको शिक्षा से वंचित करना ही है। यदि देखा जाए तो स्त्री और पुरुष में जननांगों को छोड़कर किस चीज का अन्तर है। दोनों का हृदय एक जैसे ही धड़कता है, दोनों में बराबर क्षमताएं हैं। जो काम पुरुष कर सकता है वो काम स्त्री भी कर सकती है।

स्त्रियां सभी काम कर सकती हैं। बड़े से बड़ा व सूक्ष्म से सूक्ष्म। उनकी क्षमताओं पर संदेह करना भी पुरुष-प्रधान मानसिकता का परिचायक है। जहां जहां भी स्त्री को अपनी प्रतिभा का विकास करने और उसे व्यक्त करने के अवसर मिले हैं, वहां वहां उन्होंने पुरुषों से आगे बढ़कर भी दिखाया है।अपनी मेहनत व लगन से वे हर क्षेत्र में ज्यादा कुशल व अव्वल आ रही हैं। पढ़ाई व ज्ञान के क्षेत्र में पहले दस में लड़कियों की संख्या अधिक है। वे विमान चालक हैं। ड्राईवर हैं। राजनीतिज्ञ, इंजीनियर, पत्रकार, चिंतक, अध्यापक हैं। सभी क्षेत्रों व पेशों में हैं। वे किसी क्षेत्र में पुरुष से पीछे नहीं हैं।

नारी-स्वतंत्रता

“स्त्री जाति के लिए स्वतंत्र न होना ही सब प्रकार से मंगलदायक है।— स्त्रियों में काम, क्रोध, दु:साहस, हठ, बुद्धि की कमी, झूठ, कपट, कठोरता, द्रोह, ओछापन, चपलता, अशौच, दयाहीनता, आदि विशेष अवगुण होने के कारण स्वतन्त्रता के योग्य नहीं है।’’ (नारी धर्म -पृ. 1)

“अतएव उनके स्वतन्त्र हो जाने से- अत्याचार, अनाचार, व्यभिचार आदि दोषों की वृद्धि होकर देश, जाति, समाज को बहुत ही हानि पहुंच सकती है’’(नारी धर्म -पृ. 2) ’’यह बात प्रत्यक्ष भी देखने में आती है कि जो स्त्रियां स्वतंत्र होकर रहती हैं, वे प्राय: नष्ट-भ्रष्ट हो

जाती हैं। विद्या ,बुद्धि एवं शिक्षा के अभाव के कारण भी स्त्री स्वतन्त्रता के योग्य नहीं है।''(नारी धर्म -पृ. 2)

"स्त्री को बाल, युवा और वृद्धावस्था में जो स्वतन्त्र न रहने के लिए कहा गया है, वह इसी दृष्टि से कि उसके शरीर का नैसर्गिक संघटन ही ऐसा है कि उसे सदा एक सावधान पहरेदार की जरूरत है। यह उसका पद-गौरव है न कि पारतन्त्रय।'' (नारी शिक्षा -पृ. 14)

विधवाओं के बारे में कहते हुए लिखा ''ससुराल में या पीहर में जहां कहीं रहना हो, अपने घर के पुरुषों की आज्ञा में ही रहना चाहिए, घर के बाहर तो बिना आज्ञा के जाना ही न चाहिए,परन्तु घर में रहकर भी उनके आज्ञानुसार ही कार्य करना चाहिए, क्योंकि स्त्रियों के लिए स्वतन्त्रता सर्वथा निषिद्ध है। स्वतन्त्रता से उनका पतन हो जाता है। जो स्त्री बाहर फिरती है, वह दूषित वातावरण को पाकर नष्ट-भ्रष्ट हो जाती है।''(नारी धर्म -पृ. 39)

"प्रश्न– आजकल मंहगाई के जमाने में स्त्री भी नौकरी करे तो क्या हर्ज है?

उतर– स्त्री का हृदय कोमल होता है, अत: वह नौकरी का कष्ट, ताड़ना, तिरस्कार आदि नहीं सह सकती। थोड़ी भी विपरीत बात आते ही उसके आंसू आ जाते हैं। नौकरी को चाहे गुलामी कहो, चाहे दासता कहो, चाहे तुच्छता कहो, एक ही बात है। गुलामी को पुरुष तो सह सकता है, पर स्त्री नहीं सह सकती। अत: नौकरी, खेती, व्यापार आदि का काम पुरुषों के जिम्मे है और घर का काम स्त्रियों के जिम्मे है। अत: स्त्रियों की प्रतिष्ठा, आदर घर का काम करने में ही है। बाहर का काम करने में स्त्रियों का तिरस्कार है। यदि स्त्री प्रतिष्ठा सहित उपार्जन करे तो कोई हर्ज नहीं है अर्थात वह अपने घर में ही रहकर जीविका उपार्जन कर सकती है जैसे – स्वेटर आदि बनाना, कपड़े सीना, पिरोना, बेलपत्ती आदि निकालना, भगवान के चित्र सजाना आदि। ऐसा काम करने से वह किसी की गुलाम, पराधीन नहीं रहेगी।''(गृहस्थ में कैसे रहें पृ. 78)

"प्रश्न– आजकल स्त्री को पुरुष के समान अधिकार देने की बात कही जाती है, क्या यह ठीक है?

उतर– यह ठीक नहीं है।''

स्त्री का स्वतंत्र अस्तित्व स्वीकार करने की बजाए पुरुष के साथ ही उसकी पहचान की जाती है। इसलिए वह उसका परिचय किसी की मां, बहन, पत्नी व बेटी के रूप में ही दिया जाता है। स्त्री के स्वतंत्र अस्तित्व व पहचान को समाप्त करने के लिए ही बचपन में पिता का, जवानी में पति का और बुढापे में बेटे के संरक्षण में रहने की व्यवस्था की गई। इसी कारण यौन-शुचिता की अवधारणा विकसित हुई। बेटी को 'पराया धन' व 'अमानत' समझा गया, जिसे पिता को उसके पति को सौंपना है। पिता को उसकी सुरक्षा करनी है।

समानता की विरोधी शक्तियों को स्वतंत्रता से सबसे बड़ा खतरा दिखाई देता है, क्योंकि स्वतंत्र व्यक्ति असमानता को स्वीकार नहीं करता। समाज में असमानता को बनाए रखने के लिए गुलाम बनाए रखना आवश्यक है, इसलिए कभी किसी चीज का वास्ता देकर तो कभी किसी चीज का वास्ता देकर गुलाम बनाए रखना चाहते हैं। स्त्री को गुलाम बनाए रखने के लिए उसमें ऐसे ऐसे दुर्गुण ढूंढ निकाले हैं कि सोचकर ही इस प्रकाशन से घृणा हो जाए। अभी तक तो स्त्री को ममता, विनम्रता व सहनशीलता की साक्षात मूर्ति कहा जाता था, लेकिन इस प्रकाशन ने उसे अवगुणों की खान बना दिया है। ऐसा तो कोई घोर स्त्री विरोधी ही कर सकता है।

घर की चारदिवारी स्त्री के लिए बंधन रही है। यदि वह घर से बाहर काम करने के लिए जाती है तो उसे कुछ न कुछ स्वतंत्रता अवश्य हासिल होती है। इसलिए उसका बाहर न जाने का ही फतवा दे दिया। घर में परम्परागत कामों को ही करने व उन्हीं से अपना गुजारा चलाने की सलाह स्त्रियों के हमेशा परतंत्र रहने के इंतजाम करने के अलावा क्या है? क्योंकि जिन चालाक लोगों ने परतंत्र रखने की सोची है वे इस बात को अच्छी तरह जानते हैं कि किसी भी समाज या वर्ग को तभी तक परतंत्र रखा जा सकता है जब तक कि वह आर्थिक रूप से उन पर निर्भर रहे और तमाम आर्थिक संसाधनों पर वर्चस्वशाली लोगों का कब्जा बना रहे।

ध्यान देने की बात है कि 'नारी शिक्षा' पुस्तक में तो उसके लिए शिक्षा व ज्ञान प्राप्त करने की मनाही कर दी थी। उसे इस योग्य नहीं माना कि वह शिक्षा पा सके और 'नारी धर्म' पुस्तक में 'विद्या, बुद्धि एवं शिक्षा के अभाव के 'कारण उसे स्वतंत्रता के अयोग्य और गुलामी के योग्य ठहरा दिया है। स्त्री की गुलामी को 'पद-गौरव' की संज्ञा देकर उसे छलने की कोशिश की गई है।

स्त्री का पुरुष के लिए और पुरुष का स्त्री के लिए साथ सामाजिक व व्यक्तिगत जीवन में प्रेम व आनंद का संचार है। यह समानता की नींव पर ही संभव है। समानता का अर्थ इतना ही है कि स्त्री को कानूनी, राजनैतिक, सामाजिक, आर्थिक व पारिवारिक मामलों में पुरुष के बराबर अधिकार हो।

पतिव्रत-धर्म

"विवाहिता स्त्री के लिए पातिव्रत धर्म के समान कुछ भी नहीं है, इसलिए मनसा, वाचा, कर्मणा पति के सेवापरायण होना चाहिए। स्त्री के

लिए पतिपरायणता ही मुख्य धर्म है। इसके सिवा सब धर्म गौण हैं। (नारी धर्म -पृ. 26)

“इसलिए पति की आज्ञा के बिना यज्ञ, दान, तीर्थ, व्रत आदि भी नहीं करने चाहिए, दूसरे लौकिक कर्मों की तो बात ही क्या है। स्त्री के लिए पति ही तीर्थ है,पति ही व्रत है,पति ही देवता एवं परम पूजनीय गुरू भी पति ही है। ऐसा होते हुए भी जो स्त्रियां दूसरे को गुरू बनाती हैं, वे घोर नरक को प्राप्त होती हैं।(नारी धर्म -पृ. 27)

“पति यदि कामी हो, शील एवं गुणों से रहित हो भी साधवी यानि पतिव्रता को ईश्वर के समान मानकर उसकी सेवा-शुश्रूषा करनी चाहिए

विशील: कामवृतो वा गुणैर्वा परिर्विजत:।
उपचर्य: स्त्रिया साधव्या सततं देववत् पति:।। (मनु. 5/154)’’(नारी धर्म -पृ. 29)

“जो काम पति की इच्छा के विरूद्ध हो उसको कभी न करो, चाहे वह काम तुमको कितना ही प्यारा क्यों न हो। पति की जैसी इच्छा देखो वैसा ही बरतो। जहां पति कहे, वहीं बैठो, जब कहे, तभी उठो,जो कहे, सो ही करो, अपने मन से किसी भी दूसरी बात को बनाकर पति की इच्छा को न बिगाड़ो।’’ (स्त्री-धर्म प्रश्नोतरी- पृ. 24)

“पति कैसा ही रोगी, कुकर्मी और दुराचारी हो तुम तो उसे ईश्वर के नाम जानो और नित्य उसकी दासी बनी रहो।’’(स्त्री-धर्म प्रश्नोतरी- पृ. 24)

“यदि पति परस्त्रीगामी है तो भी उससे चिढकर बुरा व्यवहार न करो और न सौत से ईर्ष्या या डाह करो। तुम तो अपना धर्म समझकर पति की सेवा ही करती रहो’’ (स्त्री-धर्म प्रश्नोतरी- पृ. 25)

पितृसत्ता या पुरुष-प्रधान व्यवस्था में पुरुष का दर्जा औरत से ऊंचा है। वह औरत का स्वामी है। औरत से अपेक्षा की जाती है कि वह पुरुष के नियंत्रण में रहे। स्त्री को पति की सेवा करने का, पति का वंश चलाने के लिए पुत्रों को जन्म देने वाला साधन माना जाता है। समर्पण, त्याग व सहनशीलता स्त्री का सबसे बड़ा गुण माना जाता है ‘पति परमेश्वर’ की सेवा उसके जीवन का मार्गदर्शक। पति की ‘सेवा’ को स्त्री के जीवन का लक्ष्य माना गया है। वही उसका सौभाग्य है। वह जैसा भी हो (रोगी, परस्त्रीगामी) उसकी सेवा ही उसका धर्म के रूप में प्रचारित करने वाला यह प्रकाशन इस व्यवस्था को बनाए रखने के लिए तरह-तरह के भय दर्शाता है। पतिव्रत-धर्म को स्त्री के लिए आदर्श मानने वाली रूढिवादी विचारधारा समाज को अत्यधिक पीछे ले जाने की साजिश रच रही है। इससे सम्बधित विचार देखना उचित होगा, जिनमें स्त्री-विरोधी मानसिकता स्वत: ही व्याख्यायित है।

औरत को 'दीर्घायु', 'चिरजीव हो' का आशीर्वाद नहीं दिया जाता बल्कि 'सौभाग्यवती भव' आशीर्वाद दिया जाता है। उसका सौभाग्य सिर्फ पति के साथ ही होता है। उसे सदा सुहागिन रहने का आशीर्वाद दिया जाता है और सुहागिन का परम कर्तव्य है कि वह अपने तन-मन से पति की 'सेवा' करे। उसकी इच्छाओं का ख्याल रखे। पति की संतुष्टि करना व सेवा ही उसके जीवन का लक्ष्य है, मुक्ति का मार्ग है। पति ही उसका परमेश्वर है उसी की पूजा उसका 'धर्म' है। पति चाहे कितना ही क्रूर, निर्दयी व अत्याचारी क्यों न हो उसकी आज्ञा पालन ही उसके व्यक्तित्व का सबसे बड़ा गुण माना गया है। पति से अलग स्त्री की पहचान नहीं की गई, इसलिए शादी के बाद वह पति का नाम ही धारण करती है। पत्नी को 'अर्धांगिनी' कहा जाता है यानी कि पुरुष का आधा अंग। जब स्त्री स्वयं पूर्ण इकाई नहीं है और वह पति का आधा अंग है तो आधा अंग जलने के कारण उसकी 'मुक्ति' नहीं हो सकती। इस मान्यता के कारण ही पत्नी को बिना मौत के ही मरना पड़ता था और बिना मरे ही जलना पड़ता था। उसकी करूण पुकार न सुनाई दे, इसलिए उत्सव का माहौल बनाया जाता रहा।

पर्दा-प्रथा

''लज्जाशीलता से सतीत्व और पातिव्रत्य का पोषण और संरक्षण होता है। इसीलिए लज्जा का स्त्री का भूषण बतलाया गया है।'' (नारी शिक्षा –पृ. 73)

''स्त्रियों के लिए पर्दा रखना एक लज्जा का अंग है। बहुत से भाई लोग इसको स्वास्थ्य,सभ्यता और उन्नति में बाधक समझकर हटाने की जी तोड़ कोशिश करते है,यह समझना उनकी दृष्टि में ही ठीक हो सकता है,किन्तु वास्तव में पर्दे की प्रथा अच्छी है और पूर्वकाल से चली आती है। राजपूताना आदि देशों में जहां पर्दे की प्रथा है, वहां की स्त्रियों के स्वास्थ्य को देखते हुए कौन कह सकता है कि पर्दे से स्वास्थ्य बिगड़ता है। स्वास्थ्य बिगडऩे में स्त्रियों की अकर्मण्यता प्रधान है, न कि पर्दा। स्त्रियों की सभ्यता तो लज्जा में है, न कि पर्दा उठाकर पुरुषों के साथ घूमने-फिरने में, मोटर आदि में बैठने या थियेटर-सिनेमा आदि में जाने में। जो स्त्रियां सदा से पर्दा रखती आयी हैं, उनमें उसके त्याग से निर्लज्जता की वृद्धि होकर, व्यभिचार आदि दोष आकर नष्ट-भ्रष्ट होने की संभावना है जो महान् अवनति या पतन है।''(नारी-धर्म, पृ.-23)

''जिस प्रकार स्त्रियों के जेल की काल-कोठरी की तरह बन्द रहना उनके लिए हानिकर है, उसीप्रकार वरन् उससे भी कहीं बढ़कर हानिकर उनका स्त्रियोचित लज्जा को छोड़कर

पुरुषों के साथ निरंकुश रूप से घूमना-फिरना, पार्टियों में शामिल होना, पर पुरुषों से नि:संकोच मिलना,सिनेमा तथा गन्दे खेल तमाशों में जाना,सिनेमा में नटी बनना, पर पुरुषों के साथ खान-पान तथा नृत्य-गीतादि करना आदि है। नारी के पास सबसे मूल्यवान तथा आदरणीय संपति है उसका सतीत्व। सतीत्व की रक्षा ही उसके जीवन का सर्वोच्च ध्येय है। इसीलिए वह बाहर न घूमकर घर की रानी बनी घर में रहती है। इसी कारण से उसके लिए अवरोध प्रथा का विधान है।'' (नारी शिक्षा पृ. 73)

2020
VISION

''यह लज्जा का आदर्श है। वस्तुत: हिन्दुओं में वैसे पर्दा है ही नहीं, यह तो शील संकोच का सुन्दर निदर्शन है।...यह तो बड़ों के सत्कार के लिये एक शील-संकोच का पवित्र भाव है, जो होना ही चाहिए।'' (नारी शिक्षा पृ. 74)

''जिन स्त्रियों ने घर छोड़कर स्वच्छन्द पुरुष वर्ग में विचरण किया है, वे अन्यान्य बाहरी कार्यों में चाहे कितनी ही सुख्याति प्राप्त क्यों न कर लें, पर यदि वे अन्तर्मुखी होकर अपने चरित्र पर दृष्टिपात करेंगी तो उनमें से अधिकांश को यह अनुभव होगा कि उनके मन में बहुत बार विकार आया है और किसी का तो पतन भी हो गया है। बताइये, पतिव्रता स्त्री के लिये यह कितनी बड़ी हानि है।'' (नारी शिक्षा – पृ. 77)

''आजकल जो स्त्रियों को साथ लेकर घूमने-फिरने तथा एक ही टेबल पर एक साथ खाने-पीने की प्रथा बढ़ रही है, यह वस्तुत: दोषयुक्त न दीखने पर भी महान् दोष उत्पन्न करने वाली है।'' (नारी शिक्षा – पृ. 79)

समाज-सुधारकों ने पर्दा प्रथा को न केवल स्त्री के विकास में बाधक माना था, बल्कि मानव जाति पर एक कलंक बताया था। इस सामाजिक बुराई को दूर करने के लिए आधुनिक विचारकों ने मुहिम चलाई थी। परंतु हैरीनी होती है कि 21वीं शताब्दी में भी इसको लज्जा का, सम्मान का प्रतीक मानकर न केवल उचित ठहराया जा रहा है बल्कि महिमामंडित भी किया जा रहा है। सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है कि किस तरह के दकियानूसी विचारों को धर्म के तौर पर प्रस्तुत किया जा रहा है।

व्यायाम

“शरीर में बल बढ़ाने के लिए बरतन आदि का मलना,घर को झाड़ना-बुहारना, आटा पीसना, चावल कूटना ,जल भरना, बड़ों की सेवा-सुश्रुषा आदि परिश्रम के काम करने चाहिये। कन्याओं के लिए यही उतम व्यायाम है, इनसे शरीर में बल की वृद्धि एवं मन की पवित्रता भी होती है। शारीरिक और मानसिक कष्ट सहने आदि की आदत डालनी चाहिए। पूर्व में बताए हुए पुरुषों के और स्त्री-जाति के सामान्य धर्मों को सीखने की कोशिश करनी चाहिये। बड़ों और दूसरों के कहे हुए कठोर वचनों को भी शिक्षा मानकर प्रसन्नता से सुनना और उनमें शिक्षा हो तो ग्रहण करनी चाहिए। दूसरों के कहे हुए कड़वे और अप्रिय वचनों को भी हित खोजना चाहिए।’’ (नारी-धर्म–पृ.-25)

विधवा

“स्त्री विधवा क्यों होती है? इसका कारण है–स्त्री के पूर्वजन्म का असदाचार’’(नारी शिक्षा -पृ. 102)

“पवित्र पुष्प ,मूल,फलों के द्वारा निर्वाह करते हुए अपनी देह को दुर्बल भले ही कर दे, परंतु पति के मरने पर दूसरे का नाम भी न ले। पतिव्रता स्त्रियों के सर्वोतम धर्म को चाहने वाली विधवा स्त्री मरणपर्यन्त क्षमायुक्त नियमपूर्वक ब्रह्मचर्य से रहें’’ (नारी धर्म – पृ. 35)

“उत्सव और मंगलादि कार्यों में शामिल न हो। सधवा और युवती स्त्रियों की बात न देखे और न सुने, आभूषण और श्रृंगार त्याग दे, बाल संवारना, पान खाना और सुगन्धित पदार्थों का सेवन करना छोड़ दे।’’(स्त्री धर्मप्रश्नोतरी–पृ. 21)

“जहां तक हो सके धरती पर सोवे, कोमल बिछौना न बिछावे, एक समय भोजन करे, उत्तेजक पदार्थ न खाए, महीन,रेशमी और फैशन वाले वस्त्रों को त्याग दे, जहां तक हो सके पवित्र, मोटे हाथ से बुने हुए देशी वस्त्र काम में लावे, यथासाध्य रंगीन वस्त्र न बरते’’ (स्त्री धर्मप्रश्नोतरी–पृ. 21)

“अत: विधवा स्त्रियों को निष्कामभाव से पतिव्रता स्त्रियों की भांति पति के मरने के बाद में भी पति को जिस कार्य में संतोष होता था,वही कार्य करके अपना काल व्यतीत करना चाहिये। वर्तमान समय में कोई भाई,जिनको शास्त्र का अनुभव नही है, विधवा स्त्रियों को फुसलाकर उनका दूसरा विवाह करवा देते हैं, किन्तु शास्त्रों में कहीं विधवा विवाह की विधि नहीं है’’ (नारी धर्म -पृ. 36)

“भारी पाप का फल पति की मृत्यु है और पाप के फल के उपभोग से पाप शान्त होता है। ईश्वर ने भारी पाप से मुक्त होने के लिए एवं भविष्य में पाप से बचने के लिए तथा नाशवान

क्षणभंगुर भोगों से मुक्ति पाने के लिए और अपने में अनन्य भक्ति करने के लिये एवं हमारे हित के लिए ही हमें यह दण्ड देकर हम पर अनुग्रह किया है'' (नारी धर्म -पृ. 37)

"प्रश्न- यदि युवा स्त्री विधवा हो जाए तो उसको क्या करना चाहिए?

उत्तर- जीवित अवस्था में पति जिन बातों को अच्छा मानते थे और उनके अनुकूल थीं, उनकी मृत्यु के बाद भी विधवा स्त्री को उन्हीं के अनुसार आचरण करते रहना चाहिये। उसको ऐसा विचार करना चाहिए कि भगवान ने जो प्रतिकूलता भेजी है,यह मेरी तपस्या के लिए है। जान-बूझकर की गई तपस्या से यह तपस्या बहुत ऊंची है। भगवान के विधान के अनुसार किये तप,संयम की बहुत महिमा है। ऐसा विचार करके उसको मन में हर समय उत्साह रखना चाहिए कि में कैसी भाग्यशालिनी हूं कि भगवान ने मेरे को ऐसा तप करने का सुन्दर अवसर दिया है।'' (गृहस्थ में कैसे रहें पृ. 75)

विधवा का अर्थ था – अपमान भरा जीवन, जिसमें कोई रस नहीं। विधवा को उस दण्ड की सजा मिलती जो उसने किया ही नहीं। किसी के मरने पर किसी का अधिकार नहीं। मृत्यु हुई पुरुष की और जीवन छिना स्त्री का। यद्यपि झगड़े तो सम्पति के थे। उसी से वंचित करने के लिए विधवा के लिए ऐसी आचार-संहिता बनाई कि वह उसका प्रयोग ही ना कर सके और स्वत: उसे छोड़ दे। आधुनिक काल में समाज सुधारकों ने विधवाओं की दुर्दशा देखकर इस तरफ ध्यान दिया था, लेकिन गीता प्रैस, गोरखपुर ने विधवा के लिए उसी व्यवस्था को ही उचित ठहराने को अपना 'धर्म' मान लिया है। इस बारे में उनके विचारों पर नजर डालना उचित रहेगा।

घरेलू-हिंसा

"प्रश्न–पति मार-पीट करे, दु:ख दे तो पत्नी क्या करना चाहिए?

उतर– पत्नी को तो यही समझना चाहिए कि मेरे पूर्वजन्म का कोई बदला है, (ऋण) है,जो इस रूप में चुकाया जा रहा है, अत: मेरे पाप ही कट रहे हैं और मैं शुद्ध हो रही हूं। पीहरवालों को पता लगने पर वे उसको अपने घर ले जा सकते हैं, क्योंकि उन्होंने मार-पीट के लिये अपनी कन्या थोड़े ही दी थी।''(गृहस्थ में कैसे रहें पृ. 70)

"प्रश्न– अगर पीहरवाले भी उसको अपने घर न ले जाएं तो वह क्या करे?

उतर–फिर तो उसको अपने पुराने कर्मों का फल भोग लेना चाहिए, इसके सिवाय बेचारी क्या कर सकती है। उसको पति की मार-पीट धैर्यपूर्वक सह लेनी चाहिए। सहने से पाप कट जायेंगें और आगे संभव है कि पति स्नेह भी करने लग जाए। यदि वह पति की मार-पीट न सह सके तो अपने पति से कहकर उसको अलग हो जाना चाहिए और अलग रहकर अपनी जीविका-संबंधी काम करते हुए एवं भगवान का भजन-स्मरण करते हुए निधड़क रहना

चाहिए। — विपत्ति आने पर आत्महत्या करने का विचार भी मन में नहीं लाना चाहिए , क्योंकि आत्महत्या करने का बड़ा भारी पाप लगता है। किसी मनुष्य की हत्या का जो पाप लगता है वही आत्महत्या का लगता है। मनुष्य सोचता है कि आत्महत्या करने से मेरा दु:ख मिट जाएगा, मैं सुखी हो जाऊंगा। यह बिल्कुल मूर्खता की बात है, क्योंकि पहले के पाप तो कटे नहीं, नया पाप और कर लिया।'' (गृहस्थ में कैसे रहें पृ. 70)

औरत की पिटाई करने वाले मानसिक रूप से बीमार नहीं होते। अच्छे खासे पढ़े-लिखे व ऊंचे ओहदों पर काम करने वाले लोगों द्वारा भी स्त्री को पीटने के काफी मामले प्रकाश में आए हैं। आमतौर पर पति और पत्नी के विवाद-झगड़े को उनका आपसी मामला ही माना जाता है। जिसमें बाहरी किसी आदमी को कोई दखल देने की इजाजत नहीं हैं। जब झगड़ा व्यक्तिगत श्रेणी का है तो स्वाभाविक है कि पति द्वारा पत्नी की पिटाई भी व्यक्तिगत ही मानी जायेगी। इसका परिणाम यह निकलता है कि जब कोई पुरुष अपनी पत्नी को पीटता है तो कोई उसको छुड़ाने की भी नहीं सोचता।औरत के पास चुपचाप पिटने के अलावा कोई चारा नहीं रहता। यदि वह पिटाई का विरोध करती है तो समाज की प्रताडऩा का शिकार होती है।

कोई भी सुसभ्य व्यक्ति पुरुष द्वारा स्त्री की पिटाई को उचित नहीं ठहरा सकता और न ही पिटाई को सहन करने की सलाह दे सकता है और इस पिटाई को 'धर्मसंगत' तो कदापि न कहेगा। कोई सैडिस्ट ही ऐसा कर सकता है ।'गीता प्रेस, गोरखपुर की पुस्तकें इसे न केवल उचित ठहराती हैं बल्कि इसका जिम्मेवार भी स्वयं स्त्री को ही मानती हैं। पिटाई को सहन करने को अपने पाप 'काटने' के लिए कहना निहायत बर्बर विचारधारा है। इससे छुटकारे की भी कोई आशा या उपाय ये नहीं बताते। स्त्री को हमेशा ही जुल्म सहते जाने को ही 'आदर्श-गृहस्थी' का आधार बताया।

स्त्री-पुनर्विवाह

''प्रश्न– स्त्री पुनर्विवाह क्यों नहीं कर सकती?

उतर– माता-पिता ने कन्यादान कर दिया तो अब उसकी कन्या संज्ञा ही नहीं रही, अत: उसका पुन: दान कैसे हो सकता है? अब उसका पुनर्विवाह करना

तो पशु धर्म ही है। शास्त्रीय,धार्मिक,शारीरिक और व्यावहारिक – चारों ही दृष्टियों से स्त्री के लिए पुनर्विवाह अनुचित है।''(गृहस्थ में कैसे रहें पृ. 75)

"प्रश्न-अगर पति त्याग कर दे तो स्त्री को क्या करना चाहिए?

उत्तर-वह अपने पिता के घर पर रहे।पिता के घर पर रहना न हो सके तो ससुराल अथवा पीहरवालों के नजदीक किराये का कमरा लेकर रहे और मर्यादा, संयम, ब्रह्मचर्यपूर्वक अपने धर्म का पालन करे, भगवान का भजन स्मरण करे।पिता से या ससुराल से जो कुछ मिला है, उससे अपना जीवन निर्वाह करे। अगर धन पास में न हो तो घर में रहकर ही अपने हाथों से कातना-गूंथना, सीना-पिरोना आदि काम करके अपना जीवन-निर्वाह करे। यद्यपि इसमें कठिनता होती है,पर तप में कठिनता ही होती है, आराम नहीं होता। इस तप से उसमें आधयात्मिक तेज बढ़ेगा, उसका अन्त:करण शुद्ध होगा।''(गृहस्थ में कैसे रहें, पृ. 72)

स्त्री को न केवल पुनर्विवाह न करने को स्त्री का धर्म बताया है बल्कि 'शास्त्रीय,धार्मिक,शारीरिक और व्यावहारिक 'दृष्टि से अनुचित बताया है। इन चारों आधारों पर इसे किसी भी रूप में अनुचित नहीं ठहराया जा सकता। इस तरह के दकियानूसी व घोर पुरुषवादी विचारों को किसी भी समाज के लिए शुभ नहीं कहा जा सकता। लेकिन समाज में पिछड़ेपन को थोंपने की कोशिश में लगा यह प्रकाशन लगातार समाज में ऐसे विचारों को प्रचारित व प्रसारित कर रहा है

सम्पति का अधिकार

"प्रश्न– भाई और बहन का आपस में कैसा व्यवहार होना चाहिये?

उतर– सरकार ने पिता की सम्पति में बहन के हिस्से का जो कानून बनाया है, उससे भाई-बहन में लड़ाई हो सकती है, मनमुटाव होना तो मामूली बात है। वह जब अपना हिस्सा मांगेगी, तब बहन-भाई में प्रेम नहीं रहेगा। हिस्सा पाने के लिए जब भाई-भाई में भी खटपट हो जाती है,तो फिर भाई-बहन में खटपट हो जाए, इसमें कहना ही क्या है! अत: इसमें बहनों को हमारी पुरानी रिवाज (पिता की सम्पति का हिस्सा न लेना) ही पकड़नी चाहिए, जो कि धार्मिक और शुद्ध है। धन आदि पदार्थ कोई महत्त्व की वस्तुएं नहीं है। ये तो केवल व्यवहार के लिए ही है। व्यवहार भी प्रेम को महत्त्व देने से ही अच्छा होगा,धन को महत्त्व देने से नहीं। धन आदि पदार्थों का महत्त्व वर्तमान में कलह कराने वाला और परिणाम में नरकों में ले जाने वाला है। इसमें मनुष्यता नहीं है। जैसे, कुत्ते आपस में बड़े प्रेम से खेलते हैं, पर उनका खेल तभी तक है जब तक उनके सामने रोटी नहीं आती। रोटी सामने आते ही उनके बीच लड़ाई शुरू हो जाती है। अगर मनुष्य भी ऐसा ही करे तो फिर उसमें मनुष्यता क्या रही?'' (गृहस्थ में कैसे रहें, पृ. 22)

स्त्री को संपति से बेदखल करके ही पुरुषवादी स्त्री-विरोधी विचारधारा फली-फूली है। सम्पति को हथियाने के लिए ही तरह तरह की प्रथाएं व रिवाज बनाए गए। किसी को अपने अधीन बनाए रखने के लिए सबसे ज्यादा जरूरी रहा है कि उसे आर्थिक दृष्टि से अपने उपर निर्भर कर लिया जाए। महिला संगठनों ने हमेशा इस बात पर जोर दिया कि आर्थिक दृष्टि से स्वतंत्र किए बिना न तो उसका विकास हो सकता हे और न ही समाज सुखी रह सकता है।

नसबन्दी

"प्रश्न– नसबन्दी आप्रेशन करवाने से क्या हानि है?

उतर– जो नसबन्दी के द्वारा अपना पुरुषत्व नष्ट कर देते हैं, वे नपुसंक (हिजड़े) हैं। उनके द्वारा पिण्ड-पितरों को पानी नहीं मिलता। ऐसे पुरुष को देखना भी अशुभ माना गया है।— जो स्त्रियां नसबन्दी आपरेशन करा लेती हैं, उनका स्त्रीत्व अर्थात गर्भ-धारण करने की शक्ति नष्ट हो जाती है। ऐसी स्त्रियों का दर्शन भी अशुभ है, अपशकुन है।''(गृहस्थ में कैसे रहें पृ. 88-89)

"प्रश्न– एक-दो बार संतान होने से स्त्री मां बन ही गई, अब वह नसबन्दी आपरेशन करवा ले तो क्या हर्ज है?

उतर– वह मां तो पहले थी, अब तो नसबन्दी आपरेशन करवा लेने पर उसकी 'स्त्री' संज्ञा ही नहीं रही। कारण कि शुक्र-शोषित मिलकर जिसके उदर में गर्भ का रुप धारण करते हैं, उसका नाम स्त्री है। जो गर्भ धारण न कर सके, उसका नाम स्त्री नहीं है, जो गर्भ स्थापन न कर सके, उसका नाम पुरुष नहीं है। आपरेशन के द्वारा सन्तानोत्पति करने की शक्ति नष्ट करने पर पुरुष का नाम तो हिजड़ा होगा, पर स्त्री का क्या नाम होगा–इसका हमें पता नहीं।

परिवार नियोजन नारी जाति का घोर अपमान है, क्योंकि इससे नारी जाति केवल भोग्या बनकर रह जाती है। कोई आदमी वेश्या के पास जाता है तो क्या वह संतान प्राप्ति के लिए जाता है? अगर कोई आदमी स्त्री से संतान नहीं चाहता, प्रत्युत केवल भोग करता है तो उसने स्त्री को वेश्या ही तो बनाया।''(गृहस्थ में कैसे रहें पृ. 91)

"प्रश्न– परिवार नियोजन नहीं करेंगें तो जनसंख्या बहुत बढ़ जायेगी, जिससे लोगों को अन्न नहीं मिलेगा फिर लोग जियेंगें कैसे?

उतर– यह प्रश्न सर्वथा अनुपयुक्त है, युक्तियुक्त नहीं है। कारण कि जहां मनुष्य पैदा होते हैं, वहां अन्न भी पैदा होता है। भगवान के यहां ऐसा अंधेरा नहीं है कि मनुष्य पैदा हो और अन्न पैदा न हो।'' (गृहस्थ में कैसे रहें पृ. 91)

जनसंख्या बढोतरी पर नियंत्रण हमारे देश के लिए आजादी के बाद से ही समस्या बनी हुई है। उसके के लिए तरह तरह की योजनाएं बनाई गई। परिवार नियोजन के लिए लोगों को

प्रोत्साहन देने के लिए कई कार्यक्रम बनाए गए, जिस पर काफी धन खर्च हुआ। इसमें सबसे बड़ी बाधा वैचारिक पिछड़ापन ही रहा। इस कारण तमाम प्रयासों के बाद भी वांछित नतीजे नहीं निकल सके। लेकिन गीता प्रेस, गोरखपुर ने राष्ट्र हित को तिलांजलि देकर लोगों को अंधविश्वासी बनाना ही अपना धार्मिक कर्तव्य समझा। परिवार नियाजन अपनाने वाली महिला को महिला ही मानने से इनकार कर दिया, उसके दर्शन करना भी अपशकुन व अशुभ माना, और यहां तक कि उसे वेश्या तक की संज्ञा तक देने में कोई हिचकिाहट नहीं समझी। राष्टीय समस्याओं को भगवान के जिम्मे छोड़कर अपना पल्ला झाड़ लिया।

बलात्कार

“इसप्रकार पातिव्रत-धर्म का अधिक समय तक पालन करने पर नारी में अपूर्व शक्ति आ जाति है, फिर तो देवता भी उससे डरते हैं। कोई कामी पुरुष बलात्कार करने जाकर जीवित नहीं रह सकता। पतिव्रता एक अग्नि है, जहां पापी तिनके के समान भस्म हो जाते हैं। ऐसी स्त्री सि) नहीं,साधन-पथ पर चल रही है,वह भी किसी पापी के बलात्कार से अशुद्ध नहीं होती। यदि वह अपने मन में पाप की वासना जरा भी न आने दे तो उसके शरीर को कोई पापी बलपूर्वक स्पर्श कर देता तो भी वह वास्तव में ‘असती’ नहीं मानी जाती। वह शास्त्रीय प्रायश्चित करके अपनी दैहिक अशुद्धि को दूर करके फिर पूर्ववत शुद्ध हो जाती है।’’ (दाम्पत्य जीवन का आदर्श, पृ.-79)

“प्रश्न–यदि कोई विवाहिता स्त्री से बलात्कार करे और गर्भ रह जाए तो क्या करना चाहिए?

उतर– जहां तक बने, स्त्री के लिए चुप रहना ही बढिय़ा है। पति को पता लग जाए तो उसको भी चुप रहना चाहिए। दोनों के चुप रहने में ही फायदा है। वास्तव में पहले से ही ध्यान रखना चाहिये, जिससे ऐसी घटना हो ही नहीं।’’(गृहस्थ में कैसे रहें पृ. 88)

पुरुष प्रधान समाज में महिला पर तरह तरह के जुल्म किए जाते हैं, जिसमें बलात्कार सबसे घिनौना है। आज कल इस तरह की खबरें बहुत अधिक आ रही हैं। भिन्न भिन्न कारणों से छोटी छोटी बच्चियों और वृद्धाओं पर भी इस तरह की घटनाएं घट रही हैं। किसी परिवार से बदला लेने के लिए भी ऐसे घिनौने कृत्य हो रहे हैं, लेकिन इस स्त्री व मानव विरोधी प्रकाशन इसके लिए बलात्कारियों को दोषी न ठहराकर स्त्री को ही दोषी ठहराता है जैसे कि वह स्वयं बलात्कार को आमंत्रित करती है। दोषी लोगों को सजा दिलाने के लिए उनको प्रोत्साहित तो क्या करना बल्कि यदि कोई ऐसा करती है तो उसे चुप रहने की ही सलाह देना अपराध को बढावा देना ही है। कोई धर्म और सच्चा धार्मिक व्यक्ति अन्याय और अनाचार को सहन करने की सलाह नहीं देगा। इससे ही स्पष्ट है कि यह किस तरह के धर्म और संस्कृति को बढावा दे रहे हैं। मात्र 'शास्त्रीय प्रायश्चित' करके 'शुद्ध' होने की सलाह उसे फिर से ऐसे कुकर्म को सहन करने के लिए तैयार करने के अलावा क्या है। यह कहना कि सच्ची 'पतिव्रता' से बलात्कार करने वाला स्वयं ही भस्म हो जाएगा, असल में बलात्कार को नकारना और स्त्री पर संदेह करके उसका अपमान करना है। इस सच्चाई से कोई इनकार नहीं करेगा कि ताकतवर ही कमजोर पर ऐसे अत्याचार करता है और उसका बचाव करना असल में ताकवर का पक्ष लेना है, इसका धर्म से कोई लेना देना नहीं है।

यौन-उत्पीड़ित व हिंसा की शिकार महिला के लिए कोई सहानुभूति समाज से नहीं मिलती। वह समाज की घृणा का ही व प्रताड़ना का ही शिकार होती है। पुरुष-प्रधान समाज में पीड़ित महिला को सहानुभूति नहीं मिलती। जिस स्त्री से बलात्कार हो जाता है। वह समाज में उपहास का पात्र बन जाती है। उसी को चरित्रहीन कहा जाता है। उसकी शादी में दिक्कत आती है। यदि शादी शुदा है तो पति उसको छोड़ देता है। जबकि उसका इसमें कोई कसूर नहीं होता। उसके साथ अन्याय होता है और वही दोषी घोषित कर दी जाती है।

जब तक बलात्कार को 'इज्जत लुटने' के साथ जोड़कर देखा जाता है तब तक पीड़ित स्त्री को ही दोषी माना जाता रहेगा। क्योंकि 'इज्जत' तो स्त्री की ही लुटती है,ऐसा माना जाता है, और उसका सारा खामियाजा स्त्री को भुगतना पड़ता है। पुरुष-प्रधान समाज में परिवार की इज्जत को बचाने की जिम्मेवारी स्त्रियों पर होगी तब तक वह निर्दोष होकर भी सजा पाती रहेगी। परिवार की 'इज्जत' को यौन-शुचिता के साथ जोड़ना व इसका पूरा दायित्व स्त्री पर डाल देने की धारणा को बदलने की जरूरत है। इस मान्यता के कारण ही सारा दोष स्त्री पर आता है, जब लड़का और लड़की में प्रेम होने से और समाज की अस्वीकार्यता के कारण घर से भाग जाते हैं। तो आमतौर पर यही सुनने में आता है कि फलां कि लड़की भाग गई। कभी यह नहीं कहा जाता कि फलां का लड़का भाग गया। क्योंकि ऐसा माना जाता है कि इज्जत लुट गई है या इज्जत खत्म हो गई है, इसलिए स्त्री कई बार स्त्री आत्महत्या तक कर

लेती हैं। यदि कोई लड़की परिवार की इच्छा के विरूद्ध अपनी पसन्द से शादी कर लेती है तो परिवार के लोग अपनी इज्जत के नाम पर उसकी हत्या कर देते है। इसके विपरीत स्त्री पर अत्याचार या हिंसा या उसको किसी भी रूप में पीड़ा पहुंचाने वाले पुरुष को समाज कभी कठोर दण्ड नहीं देता। ऐसा माना जाता है कि जैसे यह तो उसका स्वाभाविक कार्य है।

कहा जा सकता है कि ये पुस्तके किसी धर्म तथा धार्मिक मूल्यों को बढावा नहीं देती, बल्कि धर्म के नाम पर पिछड़े विचारों का पोषण करना है ताकि गरीब आदमी इन में फंसा रहे और जिन लोगों के पास समाज की सत्ता, शक्ति और संसाधन हैं वे आराम से ऐश-विलास का जीवन जी सकें। कुछ समझदार व विवेकवान लोग इन को 'पागल' कहकर छोड़ देते हैं। असल में ये पागलों के विचार नहीं हैं, बल्कि यह एक सुविचारित मुहिम है, इसलिए इनकी इस कुचेष्टा को विफल करने के लिए इनका भण्डाफोड़ करने की जरूरत है। धार्मिक खोल में एक ऐसी फासीवादी विचारधारा लिए हुए है जो समाज में शोषण को मान्यता प्रदान करती है, असमानता को बढावा देती है, एक वर्ग के दूसरे पर शासन को उचित ठहराता है, अन्याय के विरोध को कुन्द करता है।

(इस लेख के सभी चित्र कारेन हैडओक की *वेबसाईट* से साभार)

लेखक – प्रोफेसर सुभाष सैनी, कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय में हिंदी विभाग में प्रोफेसर हैं।

सावित्रीबाई फुले ने दी थी पति को मुखाग्नि

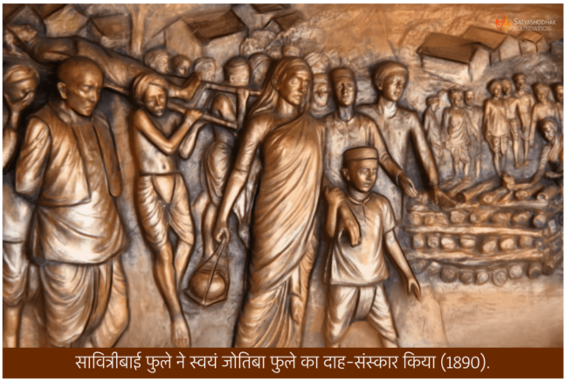

सावित्रीबाई फुले ने स्वयं जोतिबा फुले का दाह-संस्कार किया (1890).

सन् 1887 में सावित्रीबाई फुले के पति जोतिबा फुले को अंधरंग हो गया था। अपने जीवन के अंतिम तीन साल उन्होंने बिस्तर पर गुजारे। सावित्रीबाई फुले व सत्यशोधक समाज के कार्यकर्ताओं ने उनका इलाज करवाने में कोई कसर बाकी नहीं रखी। इस दौरान सावित्रीबाई फुले ने उनकी खूब सेवा की। 28 नवम्बर सन् 1890 को सावित्रीबाई फुले के पति जोतिबा फुले का देहांत हो गया।

क्या आप जानते हैं कि भारत की पहली महिला शिक्षिका सावित्रीबाई फुले ने अपने पति को मुखाग्नि दी थी। भारतीय समाज में यह क्रांतिकारी कदम था। जहां आज भी महिलाओं को कमजोर दिल की माना जाता है और शमशाम भूमि में नहीं जाने दिया जाता।

अपनी वसीयत में जोतिबा फुले ने यह इच्छा व्यक्त की थी कि मृत्यु के बाद चिता पर जलाया न जाए उन्हें नमक से ढंक कर दफनाया जाय। लेकिन नगरपालिका के अधिकारियों ने आवासीय भूमि पर शव को दफ़नाने की अनुमति नहीं दी इसलिए शव-दाह किया गया।

सावित्रीबाई फुले और जोतिबा फुले की अपनी संतान नहीं थी। इन्होंने अपने बाल हत्या प्रतिबंधक गृह में पैदा हुए बच्चे को गोद लिया था और इसका नाम यशवंत रखा था। जोतिबा फुले ने अपनी वसीयत में उत्तराधिकार के समस्त अधिकार यशवंत को दिए थे।

एक परंपरा यह थी कि जो व्यक्ति अंतिम यात्रा में 'तित्वा' (मिट्टी का छोटा घड़ा) उठाकर चलता, वही मृतक का उत्तराधिकारी माना जाता था और मृतक की संपति प्राप्त करता था। संपति के लालच में जोतिबा फुले के भतीजे (भाई के लड़के) ने यशवंत को दत्तक पुत्र बताकर 'तित्वा' उठाने पर विवाद किया और रक्त संबंधी होने के कारण इसे निभाने का दावा किया। इस विवाद में सावित्रीबाई फुले स्वयं 'तित्वा' उठाकर चली और अपने पति जोतिबा फुले का अंतिम संस्कार किया। शायद यह भारत की पहली महिला थी जिसने अपने पति को मुखाग्नि दी। जिस समाज में स्त्रियों का श्मशान भूमि में जाना तक वर्जित हो उसमें यह साहसिक कदम ही कहा जाएगा।

मौलाना अबुल कलाम आजाद हिन्दूस्तानियत की मिशाल

अमरनाथ

आज अगर आसमान से फ़रिश्ता भी उतर आए और दिल्ली के क़ुतुब मीनार की चोटी पर से ऐलान करे कि हिन्दुस्तान अगर हिन्दू-मुस्लिम एकता का ख्याल छोड़ दे तो वह चौबीस घंटों में आज़ाद हो सकता है, तो हिन्दू-मुस्लिम एकता के बजाय देश की आज़ादी को मैं छोड़ दूंगा-क्योंकि अगर आज़ादी आने में देर लग भी जाए तो इससे सिर्फ़ भारत का ही नुक़सान होगा, लेकिन हिन्दू-मुसलमानों के बीच एकता अगर न रहे तो इससे दुनिया की सारी इन्सानियत का नुक़सान होगा।"

1923 में कांग्रेस के विशेष अधिवेशन में मौलाना अबुल कलाम आजाद(11.11.1888 – 22.2.1958) ने अपना अध्यक्षीय भाषण देते हुए उक्त बातें कहीं थीं।

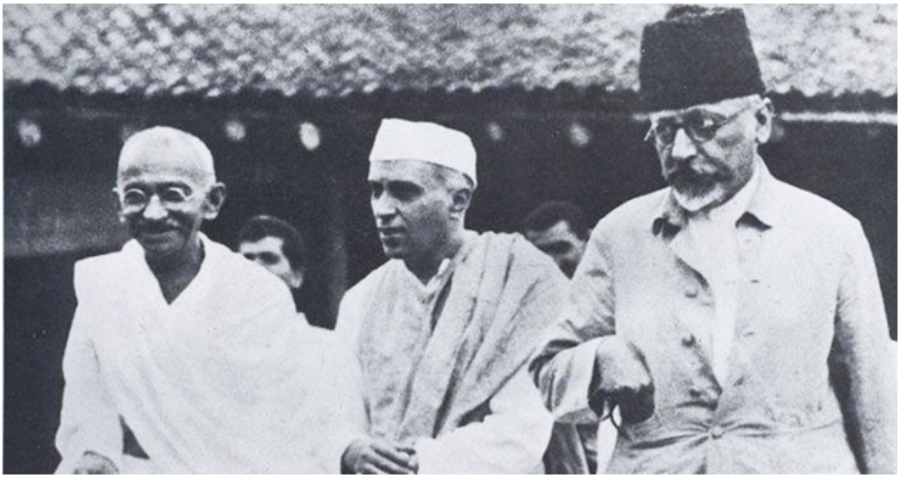

इसी तरह 1940 में लाहौर में हुए अधिवेशन में जब मुस्लिम लीग ने पाकिस्तान की मांग रखी तो उस समय इस्लाम के इस विद्वान ने मोहम्मद अली जिन्ना के इस सिद्धांत को मानने से इंकार कर दिया कि हिन्दू और मुस्लिम दो अलग राष्ट्र हैं। उन्होंने सभी मुसलमानों से हिंदुस्तान में ही रहने की अपील की। उन्होंने कहा, "हिंदुस्तान की धरती पर इस्लाम को आए ग्यारह सदियां बीत गई हैं। और अगर हिन्दू धर्म यहाँ के लोगों का हज़ारों बरसों से धर्म रहा है तो इस्लाम को भी हज़ार साल हो गए हैं। जिस तरह से एक हिन्दू गर्व के साथ यह कहता है कि वह एक भारतीय है और हिन्दू धर्म को मानता है, तो उसी तरह और उतने ही गर्व के साथ हम भी कह सकते हैं कि हम भी भारतीय हैं और इस्लाम को मानते हैं। इसी तरह ईसाई भी यह बात कह सकते हैं।"

मौलाना आज़ाद का पूरा नाम मौलाना सैयद अबुल कलाम गुलाम मुहियुद्दीन अहमद बिन खैरुद्दीन अल-हुसैन आजाद था। वे अफगान उलेमाओं के ख़ानदान से थे जो बाबर के समय हेरात से भारत आए थे। उनके अफगान पिता का नाम मौलाना सैयद मोहम्मद खैरुद्दीन बिन अहमद अलहुसैनी था और उनकी माँ का नाम शेख आलिया बिंते मोहम्मद था जो अरबी मूल की थीं। 1857 के प्रथम स्वाधीनता संग्राम के समय उनके पिता कलकत्ता छोड़ कर मक्का चले गए थे। वहीं उनकी मुलाकात अपनी होने वाली पत्नी से हुई थी। मौलाना आजाद का जन्म भी मक्का में ही हुआ था। 1890 में मोहम्मद खैरूद्दीन फिर से भारत लौट आए। बाद में कलकत्ता में उनको एक मुस्लिम विद्वान के रूप में अच्छी ख्याति मिली।

मौलाना आजाद जब सिर्फ 11 साल के थे तभी उनकी मां का देहांत हो गया। उनकी आरंभिक शिक्षा इस्लामी तौर -तरीकों से हुई। घर पर या मस्ज़िद में उनके पिता तथा बाद में अन्य विद्वानों ने उन्हें पढ़ाया। इस्लामी शिक्षा के अलावा उन्हें दर्शन शास्त्र, इतिहास तथा गणित की शिक्षा भी मिली। उन्होंने उर्दू, फारसी, हिन्दी, अंग्रेजी तथा अरबी का अच्छा ज्ञान प्राप्त कर लिया। वे असाधारण प्रतिभा के विद्यार्थी थे। बताया जाता है कि सोलह साल की उम्र में ही उन्होंने वे सारी शिक्षाएं अर्जित कर ली थीं जिन्हें आमतौर पर सामान्य विद्यार्थी 25 साल की उम्र आने तक अर्जित कर पाते थे। अपने समय और पूर्व के विद्वानों में उनके ऊपर सबसे ज्यादा प्रभाव सर सैयद अहमद खाँ, मौलाना शिबली नोमानी तथा अल्ताफ हुसैन हाली का पड़ा। उन्होंने कलकत्ता से 'लिसान-उल-सिद्' नामक पत्रिका निकाली और छात्र जीवन में ही उन्होंने अपनी एक लाइब्रेरी भी शुरू कर दी थी। इसके अलावा उन्होंने एक डिबेटिंग सोसायटी खोला और अपने से बड़े छात्रों को पढ़ाना शुरू कर दिया। उन्होंने मिस्र, अफगानिस्तान, सीरिया, इराक और तुर्की जैसे देशों की यात्राएं भी की। इन यात्राओं ने उनका व्यावहारिक ज्ञान बढ़ाने में बड़ी मदद की। तेरह साल की आयु में मौलाना आजाद का विवाह ज़ुलैखा बेग़म से हो गया। उन्हें एक बेटा भी हुआ जो मात्र चार साल तक ही जी सका।

मौलाना आज़ाद ने राजनीति में उस समय प्रवेश किया जब ब्रिटिश सरकार ने 1905 में धार्मिक आधार पर बंगाल का विभाजन कर दिया था। ज्यादातर मुस्लिम मध्यम वर्ग इस विभाजन का समर्थक था किन्तु मौलाना आज़ाद इस विभाजन के विरोध में खड़े थे। वे रवीन्द्रनाथ टैगोर सहित बंगला नवजागरण के अन्य नेताओं के साथ थे। इन्हीं दिनों वे स्वाधीनता आन्दोलन से सक्रिय रूप से जुड़ गए। वे अरविन्द घोष और श्यामसुन्दर चक्रवर्ती के सीधे संपर्क में आ गए और अखण्ड भारत के निर्माण में लग गये।

उन्होंने अपनी पुस्तक 'इंडिया विन्स फ्रीडम' में लिखा कि लोगों को यह सलाह देना सबसे बड़ा धोखा होगा कि भौगोलिक, आर्थिक और सांस्कृतिक रूप से भिन्न क्षेत्रों को धार्मिक संबंध जोड़ सकते हैं। 1906 में आल इंडिया मुस्लिम लीग के गठन के समय से ही वे उसकी अलगाववादी विचारधारा का विरोध करते रहे।

1912 में उन्होने 'अल हिलाल' नामक उर्दू अखबार का प्रकाशन शुरू किया। उनका उद्देश्य मुस्लिम युवकों को क्रांतिकारी आन्दोलनों में भाग लेने के लिए उत्साहित करना तथा हिन्दू-मुस्लिम एकता पर बल देना था। यह अखबार बहुत कम समय में ही विदेशों में भी प्रसिद्ध हो गया। कुछ ही दिनों में 'अल-हिलाल' की 26,000 प्रतियाँ बिकने लगीं। उन्होने कांग्रेसी नेताओं का विश्वास बंगाल, बिहार तथा बंबई में क्रांतिकारी गतिविधियों के गुप्त आयोजनों द्वारा भी जीता।

पं. जवाहर लाल नेहरू ने अपनी पुस्तक 'डिस्कवरी ऑफ इंडिया' में मौलाना आजाद और उनकी पत्रिका 'अल हिलाल' के बारे में विस्तार से लिखा है। नेहरू जब यह पुस्तक लिख रहे थे तो उन दिनों मौलाना आजाद भी उनके साथ अहमदनगर किले में कैद थे। नेहरू ने मौलाना आज़ाद के बारे में लिखा, "हिंदुस्तान के मुसलमानी दिमाग़ की तरक्क़ी में सन् 1912 भी एक ख़ास साल है, क्योंकि उसमें दो नए साप्ताहिक निकलने शुरू हुए। उनमें से एक तो 'अल-हिलाल' था, जो उर्दू में था और दूसरा अंग्रेज़ी में 'दि कॉमरेड' था। 'अल-हिलाल' को मौलाना अबुल कलाम आज़ाद (कांग्रेस के वर्तमान सभापति) ने चलाया था। वे एक चौबीस बरस के नौजवान थे। उनकी शुरू की पढ़ाई- लिखाई क़ाहिरा में अल-अज़हर विश्वविद्यालय में हुई थी और जिस वक़्त वे पंद्रह और बीस बरस के ही बीच में थे, उसी वक़्त अपनी अरबी और फ़ारसी की क़ाबिलियत के लिए मशहूर हो गए थे। इसके अलावा उन्हें हिंदुस्तान के बाहर की इस्लामी दुनिया की अच्छी जानकारी थी और उन सुधार-आंदोलनों का पूरा पता था जो वहां पर चल रहे थे। साथ ही उन्हें यूरोपीय मामलों की भी अच्छी जानकारी थी।"

नेहरू ने आगे लिखा है – "मौलाना आज़ाद का नज़रिया बुद्धिवादी था और साथ ही इस्लामी साहित्य और इतिहास की उन्हें पूरी जानकारी थी। उन्होंने इस्लामी धर्मग्रंथों की

बुद्धिवादी नज़रिए से व्याख्या की। इस्लामी परंपरा से वे छके हुए थे और मिस्र, तुर्की, सीरिया, फ़िलिस्तीन, इराक और ईरान के मशहूर मुस्लिम नेताओं से उनके ज़ाती ताल्लुक़ात थे। इन देशों के इख़लाकी और राजनैतिक हालात का उनपर बहुत ज़्यादा असर था। अपने लेखों की वजह से इस्लामी देशों में अन्य किसी हिंदुस्तानी मुसलमान की अपेक्षा वे ज़्यादा प्रसिद्ध थे। उन लड़ाइयों में, जिनमें कि तुर्की फंस गया था, उनकी बेहद दिलचस्पी हुई और उनकी हमदर्दी तुर्की के लिए सामने आई. लेकिन उनके ढंग और नज़रिए में और दूसरे बुज़ुर्ग मुसलमान नेताओं के नज़रिए में फ़र्क़ था.”

“मौलाना आज़ाद का नज़रिया विस्तृत और तर्कसंगत था और इसकी वजह से न तो उनमें सामंतवाद था और न संकरी धार्मिकता और न ही सांप्रदायिक अलहदगी। इसने उनको लाज़िमी तौर पर हिंदुस्तानी क़ौमियत का हामी बना दिया। उन्होंने तुर्की में और दूसरे इस्लामी देशों में क़ौमियत की तरक्क़ी को ख़ुद देखा था। उस जानकारी का उन्होंने हिंदुस्तान में इस्तेमाल किया और उन्हें हिंदुस्तानी क़ौमी आंदोलन का वही रुख़ दिखाई दिया। हिंदुस्तान के दूसरे मुसलमानों को इन देशों के आंदोलनों की शायद ही जानकारी रही हो और वे अपने सामंती वातावरण में घिरे रहे। वे सिर्फ़ मज़हबी नज़र से चीज़ों को देखते थे और तुर्की के साथ उनकी हमदर्दी सिर्फ धर्म के नाते थी। ये मजहबी मुसलमान तुर्की के साथ अपनी ज़बरदस्त हमर्ददी के बावजूद तुर्की की क़ौमी और ग़ैरमजहबी तहरीक़ों के साथ न थे।”

ब्रिटिश सरकार को ‘अल-हिलाल’ पसंद नहीं आया। आख़िर सरकार ने 1914 में 'अल-हिलाल' की जमानत ज़ब्त कर लीं। इसके बाद मौलाना आज़ाद ने एक दूसरा साप्ताहिक ‘अल-बलाग़’ निकाला, लेकिन ब्रिटिश सरकार द्वारा आज़ाद को क़ैद किए जाने के कारण यह भी सन् 1916 में बंद हो गया। मौलाना आज़ाद को सरकार के ख़िलाफ़ लिखने के जुर्म में बंगाल से बाहर भेज दिया गया। बाद में वह चार साल से भी ज़्यादा समय तक रांची के जेल में क़ैद रहे। मौलाना जब रांची के जेल में थे तब गांधी जी उनसे मुलाकात करना चाहते थे। लेकिन सरकार ने इसकी स्वीकृति नहीं दी। उसके तुरन्त बाद जनवरी 1920 में रिहा होने के बाद दिल्ली में हकीम अजमल खां के घर गाँधी जी से उनकी भेंट हुई। अपनी उस मुलाक़ात को याद करते हुए मौलाना ने बाद में लिखा,

"...आज तक, हम जैसे एक ही छत के नीचे रहते आए हैं.....हमारे बीच मतभेद भी हुए, लेकिन हमारी राहें कभी अलग नहीं हुईं। जैसे-जैसे दिन बीतते, वैसे-वैसे उन पर मेरा विश्वास और भी दृढ़ होता गया।"

दूसरी ओर गांधी जी ने कहा, "मुझे खुशी है कि सन् 1920 से मुझे मौलाना के साथ काम करने का मौक़ा मिला है। जैसी उनकी इस्लाम में श्रद्धा है वैसा ही दृढ़ उनका देश प्रेम

है। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के सबसे महान् नेताओं में से वह एक हैं। यह बात किसी को भी नहीं भूलनी चाहिए।"

रांची जेल से निकलने के बाद मौलाना आजाद फिर कांग्रेस के आन्दोलन में शामिल हो गए। गाँधी जी द्वारा चलाए गए असहयोग आन्दोलन में उन्होंने बढ़- चढ़कर हिस्सा लिया था। इसके अलावा वे खिलाफत आन्दोलन के भी अगुआ थे। खिलाफ़त, तुर्की के उस्मानी साम्राज्य की प्रथम विश्वयुद्ध में हारने पर उनपर लगाए हर्जाने का विरोध करता था। उस समय उस्मानी तुर्क मक्का पर काबिज़ थे और इस्लाम के खलीफा वही थे। इसके कारण विश्वभर के मुस्लिमों में रोष था। भारत में यह खिलाफ़त आंन्दोलन के रूप में उभरा जिसमें उस्मानों को हराने वाले मित्र राष्ट्रों (ब्रिटेन, फ्रांस, इटली) के साम्राज्य का विरोध किया गया था।

मौलाना आजाद हमेशा कांग्रेस में सम्मानित स्थान पर रहे। उनकी लोकप्रियता इतनी अधिक थी कि 35 वर्ष की आयु में 1923 में वे भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के अब तक के सबसे युवा अध्यक्ष बन गये। क़ौमी और राजनैतिक मामलों के साथ ही सांप्रदायिक या अल्पसंख्यक समस्या के सिलसिले में उनकी सलाह की बहुत क़द्र की जाती थी। वे दो बार कांग्रेस के सभापति रहे।

1942 में कांग्रेस के बंबई अधिवेशन के दौरान जब महात्मा गांधी के नेतृत्व में 'अंग्रेजो, भारत छोड़ो' का आन्दोलन शुरू हुआ तो उस दौरान मौलाना आजाद ही कांग्रेस के अध्यक्ष थे। वे उसमें शामिल होने के लिए जब घर से निकल रहे थे, तो उस दौरान उनकी पत्नी गंभीर रूप से बीमार थीं। अधिवेशन के बाद मौलाना आजाद वहीं से 9 अगस्त 1942 को गिरफ्तार कर लिए गए।

दूसरे दिन उन्होंने लिखा- "यह छठवाँ अनुभव है...पिछली पाँच बार में मैंने जेलों में कुल मिलाकर सात साल और आठ महीने की अवधि बिताई है..... जो मेरी आज तक की तिरपन साल की उम्र का सातवां हिस्सा है।"

इस बार मौलाना आज़ाद को अहमदनगर किले में कैद कर दिया गया। जब वे जेल में बंद थे, उसी दौरान उनकी पत्नी का निधन हो गया। उनकी पत्नी के निधन की सूचना जेल में पं. नेहरू ने ही उन्हें दी थी और जोर दिया था कि कुछ हफ्तों के लिए मौलाना को बाहर चले जाना चाहिए। मौलाना ने उस वक्त नेहरू से विनम्रता के साथ कहा था कि जो सरकार हमें सही मायने में आजादी देने से इनकार कर रही है, उससे कुछ हफ्तों के लिए आजादी मांगने का कोई फायदा नहीं है। वे यह कहकर चुप हो गए कि "अब अगर खुदा ने चाहा तो हम जन्नत में मिलेंगे।"

नेहरू ने लिखा है कि उस घटना से वे बिल्कुल टूट चुके थे। फिर भी उन्होंने अपने पर नियंत्रण रखा। कुछ समय बाद वे अपनी स्वस्थ और स्वाभाविक स्थिति में आ गये। वे जेल

में ही थे कि उनकी प्यारी बड़ी बहन भी चल बसीं। तब उन्होंने लिखा- " जेल में ज़्यादातर समय मैंने भारी मानसिक तनाव के बीच गुज़ारा। इससे मेरी तबीयत पर बहुत बुरा असर पड़ा। मेरी गिरफ्तारी के वक़्त मेरा वजन 170 पौंड था। जब मुझे बंगाल के बांकुड़ा जेल में भेज गया तब मेरा वजन कम होकर 130 पौंड रह गया था। मैं बड़ी मुश्किल से ही कुछ खा पाता था।"

इस बार वे जुलाई 1945 तक जेल में रहे। इसे मिलाकर उन्होंने कुल दस साल और पाँच महीने जेल में ग़ुजारे थे। जेल से छूटने के बाद जब वे लौटे तो लिखा, "मेरी पत्नी फाटक तक मुझे छोड़ने के लिए आई थीं। अब मैं तीन साल के बाद लौट रहा हूँ पर वह अपनी क़ब्र में हैं और मेरा घर सूना पड़ा है.....मेरी कार में फूलों के हारों के ढेर हैं। उनमें से एक हार उठाकर मैंने उसकी क़ब्र पर रख दिया और "फातिहा" (प्रार्थना) पढ़ने लगा।"

मुस्लिम लीग के 'टू नेशन थ्योरी' का मौलाना आजाद द्वारा लगातार विरोध करने के बावजूद अंत में उनकी पार्टी भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस भी विभाजन के लिए राजी हो गई। मौलाना इससे बहुत दुखी थे। 15 अप्रैल, 1946 को उन्होंने कहा कि मुस्लिम लीग की अलग पाकिस्तान की मांग के दुष्परिणाम न सिर्फ भारत बल्कि खुद मुसलमानों को भी झेलने पड़ेंगे क्योंकि वह उनके लिए ज्यादा परेशानियां पैदा करेगा।

आजादी के बाद मौलाना आजाद, उत्तर प्रदेश के रामपुर से 1952 में सांसद चुने गए। हिन्दू महासभा ने उनके खिलाफ बिशनचंद सेठ को चुनाव मैदान में उतारा था। देशभर में कांग्रेस के लिए प्रचार की जिम्मेदारी सिर पर होने के कारण मौलाना के लिए रामपुर जाकर अपने मतदाताओं से मिलने का समय निकालना मुश्किल था। बहुत हाथ-पांव मारने और कई प्रत्याशियों के आग्रह को मना करने के बाद भी वे सार्वजनिक रूप से चुनाव प्रचार का

वक्त खत्म होने से पहले रामपुर नहीं जा सके। जब पहुंचे तो घर-घर जाकर प्रचार करने का समय ही बचा था। इसके बावजूद मतगणना हुई तो मौलाना 59.57 प्रतिशत वोट पाकर बड़े सम्मान के साथ विजयी हुए थे।

आजाद भारत के वे पहले शिक्षा मंत्री बने। उन्होंने ग्यारह वर्ष तक राष्ट्र की शिक्षा नीति का मार्गदर्शन किया। देश के लिए उन्होंने एक राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली बनाई जिसमें मुफ्त प्राथमिक शिक्षा उनका पहला लक्ष्य था। उन्होंने 14 वर्ष तक की आयु के सभी बच्चों के लिए निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा, कन्याओं की शिक्षा, व्यावसायिक प्रशिक्षण, कृषि शिक्षा और तकनीकी शिक्षा के क्षेत्र में उल्लेखनीय कार्य किए। मौलाना आजाद ने 1951 में अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद्, खड़गपुर की स्थापना की और उसके बाद मुंबई, चेन्नई, कानपुर और दिल्ली में आई.आई.टी. की स्थापना की। 1955 में उन्होंने दिल्ली में स्कूल ऑफ प्लानिंग और वास्तुकला विद्यालय स्थापित किया।

भारत में उच्च शिक्षा के विकास के लिए 'विश्वविद्यालय अनुदान आयोग' की स्थापना का श्रेय मौलाना आजाद को ही है। 'भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद' की स्थापना भी उन्ही की देन है। उन्होंने शिक्षा और संस्कृति के स्वस्थ विकास के लिए अनेक श्रेष्ठ संस्थानों की स्थापना की। साहित्य, संगीत तथा नाटक के समुचित विकास के लिए उन्होंने संगीत नाटक अकादमी, साहित्य अकादमी तथा ललित कला अकादमी की भी स्थापना की।

मौलाना आजाद बहुत अच्छे वक्ता थे। उनके शब्दों में जादू का-सा असर होता था। अक्टूबर, 1947 में जब हज़ारों की संख्या में दिल्ली के मुसलमान पाकिस्तान जा रहे थे तो उन्होंने जामा मस्जिद के प्राचीर से अद्भुत भाषण दिया। उन्होंने कहा,

"जामा मस्जिद की ऊंची मीनारें तुमसे पूछ रही है कि कहाँ जा रहे हो ? तुमने इतिहास के पन्नों को कहाँ खो दिया ? कल तक तुम यमुना के तट पर वजू किया करते थे और आज तुम यहाँ रहने से डर रहे हो ? याद रखो कि तुम्हारे ख़ून में दिल्ली बसी है। तुम समय के इस झटके से डर रहे हो। वे तुम्हारे पूर्वज ही थे जिन्होंने गहरे समुद्र में छलांग लगाई, मज़बूत चट्टानों को काट डाला, कठिनाइयों में भी मुस्कुराए, आसमान की गड़गडाहट का उत्तर तुम्हारी हँसी के वेग से दिया, हवाओं की दिशा बदल दी और तूफ़ानों का रूख मोड़ दिया। यह भाग्य की विडम्बना है कि जो लोग कल तक राजाओं की नियति के साथ खेले उन्हें आज अपने ही भाग्य से जूझना पड़ रहा है और इसलिए वे इस मामले में अपने परमेश्वर को भी भूल गये हैं जैसे कि उसका कोई अस्तित्व ही न हो। वापस आओ यह तुम्हारा घर है, तुम्हारा देश।"

उनके भाषण का इतना अधिक प्रभाव हुआ कि जो लोग पाकिस्तान जाने के लिए अपना सामान बाँध कर तैयार थे वे स्वतंत्रता और देशभक्ति की एक नई भावना के साथ घर

लौट आए और इसके बाद यहाँ से नहीं गए। अंतर्राष्ट्रीय भाषणों के इतिहास में, जामा मस्जिद पर दिए गये मौलाना आज़ाद के इस भाषण की तुलना लोगों ने अब्राहम लिंकन के गैट्सबर्ग में दिए भाषण से अथवा गाँधी जी की हत्या पर नेहरू के बिरला हाऊस में दिये गये भाषण अथवा मार्टिन लूथर के भाषण- 'मेरा एक सपना है,' से किया है।

कांग्रेस के नेताओं में मौलाना को उनकी एक अन्य महान् विशेषता के लिए भी याद किया जाता था। जब कभी भी कांग्रेसियों के बीच मतभेद हो जाते थे तब मौलाना ही उन्हें फिर से एक करते थे क्योंकि सब लोग उनका आदर करते थे। आख़िरी दिन तक वे जवाहरलाल नेहरू के सबसे निकटतम मित्र और साथी बने रहे। वे उनके सबसे विश्वसनीय सलाहकार और समर्थक भी थे।

22 फरवरी 1958 को ब्रेन हैमरेज से इस महामानव का निधन हो गया। कहा जा सकता है कि मौलाना आजाद धार्मिक वृत्ति के व्यक्ति होते हुए भी सही अर्थों में भारत की धर्मनिरपेक्ष सभ्यता के प्रतिनिधि थे।

शेरो-शायरी और गज़लगोई का शौक अबुल कलाम को युवावस्था से ही था। ‘आज़ाद’ उनका तखल्लुस था। उनकी शुरुआती रचनाएं ‘अरमुग़ान-ए-फारुख़’ और ‘ख़दंग-ए-नज़र’ जैसी पत्रिकाओं में नियमित छपती थीं।

‘इंडिया विन्स फ्रीडम’ उनकी महत्त्वपूर्णपुस्तक है। उन्होंने कुरान का अरबी से उर्दू में अनुवाद किया है। उनकी अन्य पुस्तकों में ‘गुबार-ए-खातिर’, ‘हिज्र-ओ-वसल’, ‘खतबात-ल-आज़ाद’, ‘हमारी आज़ादी’’ प्रमुख हैं।

उन्होंने हमेशा सादगी का जीवन पसंद किया। जब उनका निधन हुआ तब उनके पास कोई संपत्ति नहीं थी और न ही कोई बैंक खाता था। उनकी निजी अलमारी में कुछ सूती अचकन, एक दर्जन खादी के कुर्ते पायजामें, दो जोड़ी सैंडल, एक पुराना ड्रेसिंग गाऊन और एक उपयोग किया हुआ ब्रुश मिला किंतु वहाँ अनेक दुर्लभ पुस्तकें थी जो अब राष्ट्र की सम्पत्ति हैं।

मौलाना अबुल कलाम आजाद को मरणोपरान्त भारत के सर्वोच्च नागरिक सम्मान ‘भारत रत्न’ से विभूषित किया गया। उनके जन्मदिन को ‘राष्ट्रीय शिक्षा दिवस’ के रूप में मनाया जाता है किन्तु खेद है कि पिछले कुछ वर्षों से आयोजन नाममात्र के होते हैं और उल्लास नजर नहीं आता।

संपर्क - 9433009898

सरफ़रोशी

गंगा राम राजी

नरेन्द्र देव जोशी लाहौर में एक जज के घर 15 मई 1892 में पैदा हुए। लाहौर उस समय क्रांतिकारियों का गढ़ था। लाला लाजपतराय, अजीत सिंह, और सारे युवा समुदाय की कर्म भूमि लाहौर। पंजाब केसरी लाला लाजपतराय के आंदोलन 'साइमन कमीशन वापस जाओ' ने सभी युवाओं को प्रभावित किया था। जोशी इसमें पूर्णरूप से भाग लेने लगे और जब पंजाब केसरी अंग्रेजों की लाठी से घायल हुए तो इस आंदोलन को बल मिला।

उसे पंजाब के मैदान इसलिए रास नहीं आए क्योंकि अंग्रेजों ने उसकी शूट एट साइट के आर्डर दे रखे थे। यह बात तो तय थी ही कि मरने का उसे कोई भय नहीं था। वह जिंदा इसलिए रहना चाहता था कि उसे अंग्रेजों की नाक में धुंआ देते रहना है यही उद्देश्य उसने अपने जीवन का बना रखा था। शादी नहीं की, घर से बहुत पहले ही निकल गया था। कबीर की तरह ' जो घर फूंके अपना वह चलें हमारे साथ।

लाहौर में स्कूल कालेज विश्वविद्यालय अधिक मात्रा में थे। पढ़े लिखे युवाओं का समुद्र था लाहौर। यही कारण है कि अधिक से अधिक नौजवान क्रांतिकारियों के साथ जुड़ने लगे थे। नरेंद्र भी पीछे कहाँ रह सकता था। जब उसने मैट्रिक पास कर ली तो वह क्रांतिकारियों के संपर्क में तो आ गया था। मैट्रिक पास करते ही उसी समय 1907 में पगड़ी संभाल जट्टा आंदोलन भगत सिंह के चाचा द्वारा चलाया जा रहा था। इसी आंदोलन में नरेंद्र आंदोलनकारियों के साथ हो लिया था। समझो क्रांतिकारी गतिविधियों की शुरूआत यहीं से हुई। 'पगड़ी संभाल जट्टा ' बांके दयाल द्वारा लिखे गीत को सामूहिक गान में गाया जाने लगा। इस गीत में जोशी अपने दोस्तों के साथ भाग लेने लगा। इनके पिता जी उस समय अंग्रेज हकूमत के जज थे। उन्हें सरकार की ओर से नरेंद्र की गतिविधियों के बारे वार्निंग हुई

तो बेटे को लाख समझाया परन्तु नरेंद्र बोला, ‘‘ देश को आजाद कराने के आंदोलन का साथ मेरे हाड मांस जैसा साथ है। जिंदा रहने के लिए दोनों को साथ साथ रहना होगा … नहीं छोड़ सकता डैड ..’’

दो टूक जबाव सुनने पर और इन गतिविधियों को नहीं छोड़ने के कारण बाप ने बालक नरेंद्र को घर से निकाल दिया। फिर क्या था बालक नरेंद्र अब स्वतंत्र था तो फुल टाइम आदोलन में कूद पड़ा। आस पास के लोग उसे जोशी के नाम से पुकारते थे। कुर्ता, सफेद पाजामा, सर नंगा, भगत सिंह के चाचा अजीत सिंह के मिलने के बाद वह पगड़ी धारण करने लगा था। कुछ दिनों बाद पगड़ी की जब जीत हुई तो नंगे सर ही साथियों के संग चल पड़ा, रूका नहीं।

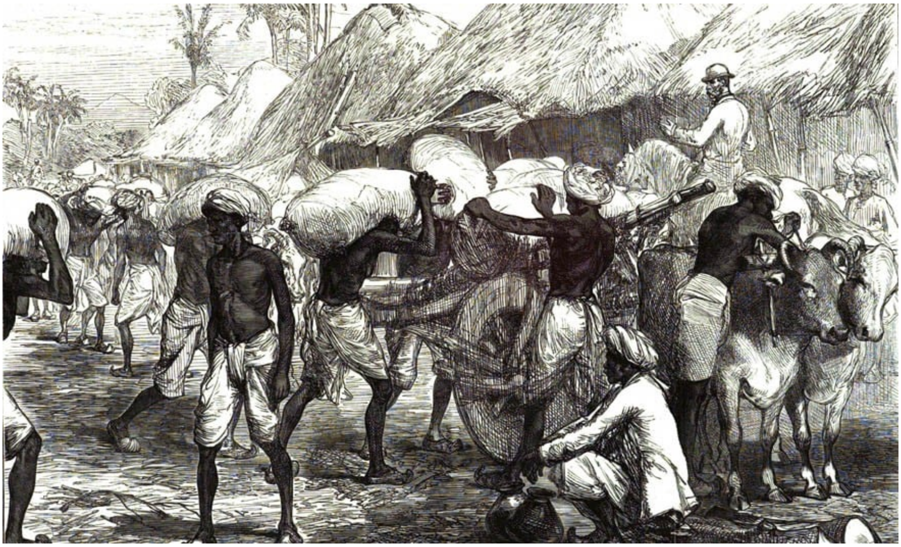

उन्हीं दिनों 1907 में किसानों का आंदोलन जोरों पर था। लोगों में जोश भरने के लिए, इसी आंदोलन के लिए भगत सिंह के चाचा अजीत सिंह संधू ने ‘पगड़ी संभाल ओ जट्टा’ बांके दयाल द्वारा लिखित गीत से आंदोलन में जान क्या डाल दी , सभी आंदोलनकारियों की जुबान पर ‘ पगड़ी संभाल ओ जट्टा ’ चढ़ गया। पंजाब के हर घर में छोटे बड़े की जुबान पर यह गाना था, यहां तक कि इस गाने के जोश में अंग्रेजों की फौज में पंजाबी फौजिओं में बगावत हो गई, फौजी फौज छोड़ने लगे।

इस गाने से आंदोलन इतना भड़का कि अंग्रेजों को किसानों के आगे झुकना पड़ा। पंद्रह साल के जोशी ने इस आंदोलन में बढ़चढ़ कर भाग लिया था। उसके जोश को देखते हुए अजीत सिंह ने उसे जोशी क्या कहा उसे सब जोशी ही कहने लगे। यहीं से उसकी जोशी नाम की स्थापना हुई थी। यहीं से जोशी ने पगड़ी डालना आरम्भ कर दी।

जोशी में जोश था, भला वह महात्मा गांधी के रास्ते पर चलने वाला कैसे हो सकता था। परन्तु महात्मा गांधी की इज्जत बहुत करता था। इज्जत इसलिए करता था कि गांधी गरीब लोगों के साथ है, भारतीय समाज को अच्छी तरह से पढ़ने वाला एक मात्र नेता। हमारे देश में रोजी रोटी के अतिरिक्त तन ढांपने के लिए भी कपड़ा नहीं है और गांधी उनके साथ खड़ा मिलता। इसी कारण वह महात्मा गांधी की इज्जत करता।

उसके अराध्य देव पंजाब के क्रांतिकारी, अजीत सिंह थे। इन क्रांतिकारियों की सोच ‘ लातों के भूत बातों से नहीं मानते ’ के साथ वह सहमत था। बाप द्वारा उसे घर से निकालने के कारण उसे क्रांतिकारियों से मिलने का सुअवसर प्राप्त हुआ। अब देश ही उसका घर है उसकी जिम्मेवारी है। सर पर तो कफन पहले ही बांध रखा था। सारे संसार में अंग्रेज मीठी मीठी बातों में राष्ट्र के नायकों को फंसा के रखते रहे और कब्जा करते रहे। यह कहावत ‘ आग लेने आई और घर वाली बन गई’ इन पर पूरी उतरती है। इसलिए वह कहता था कि ‘ इनका इलाज गुरिल्ला युद्ध’ ही है। यह सारी सीख उसे अजीत सिंह की टोली से क्या मिली, इसे अपने जीवन का ध्येय मान लिया था।

बात 1912 की है। 1907 में किसान आंदोलन में जीत के बाद, सभी क्रांतिकारियों के हौंसले बुलंद थे। लाहौर और अमृतसर बराबर क्रांतिकारियों के गढ़ बने हुए थे। इसी सिलसिले में वह अमृतसर आया हुआ था शहर पहुंचते ही दो अंग्रेजों से झगड़ा हो गया। वे उसे अंग्रेजी में गाली दे रहे थे तो यह उन्हें पंजाबी में ही गालियां दे रहा था। जब वह उन्हें ‘ भैन दी … ’ आदि बोलता था तो पास तमाशा देखने वाले गांव वासी जोर से ठहाका मारते थे, तालियां बजाते। इससे अंग्रेजों को लगा कि यह कुछ उनके बारे गंदा बोल रहा है, वे उसे अब गुस्से से बदतमीजी से बोलने लगे जिसे अंग्रेजी में बोलते हैं शाउटिंग करने लगे।

अब वह अपनी बेइज्जती समझने लगा था। इससे पहले अंग्रेज किसी पुलिस वाले को बुलाते उसने दोनों अंग्रेजों को अपने बाजुंओ से ऐसे जकड़ा कि उनकी आंखें ही बाहर निकल आंई। दोनों अंग्रेजों की जब सांस बंद हुई तो मछली की तरह तड़फते रहे, वहीं ढेर हो गए। उसे मालूम था कि अब धर पकड़ होगी, वह वहां से भाग गया। अंग्रेज उसे ढूंढते रहे वह नहीं मिला। गायब हो गया। अब सीने में क्रांति की आग सुलग रही थी। अंग्रेजों ने उसे पकड़ने के लिए चारों ओर जाल बिछा रखा था। जोशी अंग्रेजों के हाथ नहीं आना चाहता था। 1918 में वहां से भाग कर किसी तरह से सूरत पहुंच गया। अंग्रेजों को उसकी जानकारी मिली तो सूरत की पुलिस अलर्ट हो गई। पुलिस के अलर्ट होने की खबर उसे भी एक क्रांतिकारी से मिल गई। तो भागते हुए सूरत के जंगल में पुलिस से मुठभेड़ क्या हुई, टांग में गोली लग गई। अब भागा तो जा नहीं रहा था वहीं पर घने जंगल के एक पेड़ पर चढ़गया … पुलिस को चकमा दे दिया गया, पुलिस का ध्यान पेड़ पर नहीं गया था वे उसे जमीन पर ही देखते रहे।

जोशी पुलिस को चकमा देने में निपुण था। सूरत छोड़ अपनी टांग का इलाज कर वह पंजाब में लौट आया था। 1919 के अप्रैल की 13 तारीख, बैसाखी का दिन। भेस बदल कर जोशी जलियांवाले बाग के बाहर एक ओर छुपके से खड़े होकर अंदर देख सुन रहा था कि तोपें चलने की आवाज सुनाई दी। अब जोशी कैसे चुप रह सकता था पंजाबी की गालियां और पत्थराव बस यहां पकड़ा गया .... लेकिन किसी और नाम से पांच वर्ष तक अंदर जेल में। अंग्रेजों के रजिस्टर में तो जोशी मृत घोषित हो चुका था। 1924 में जेल से छूट कर बाहर आ गया। बाहर निकलते ही बिस्मिल अज़ीमाबादी का गीत गुनगुनरने लगा।

'सरफ़रोशी की तमन्ना अब हमारे दिल में है।
देखना है ज़ोर कितना बाजु-ए-क़ातिल में है। '

अब पंजाब छोड़ दिया था। अंग्रेजो की नज़र हर जेल से छूटने वाले पर रहती थी। भागते हुए लखनऊ पहुंच गया। चैन से तो यहां नहीं बैठ सकता था। यहां के क्रांतिकारियों से मुलाकात, अब जोशी की पहचान देश के क्रांतिकारियों में होने लगी थी। देश के क्रांतिकारियों द्वारा ब्रिटिश राज के विरूद्ध भयंकर युद्ध छेड़ने की इच्छा से हथियार खरीदने के लिए ब्रिटिश सरकार का ही खजाना लूट लेने की एक रेल लूटने की योजना बनाई गई। इस योजना को अंजाम के लिए 9 अगस्त 1925 का दिन चुना गया और स्थान लखनऊ के पास एक गांव काकोरी चुना गया। राम प्रसाद बिस्मिल, अशफाक उल्लाह खान, राजेंद्र लाहड़ी, केशव चक्रवती , मुकुंदी लाल, बनवारी लाल सहित जोशी के साथ दस और क्रांतिकारी थे।

डकैती में सफल हुए परन्तु जब सरकार की ओर से धर पकड़ हुई, जोशी यहां से भागने में सफल हुआ। परिणाम अपनों में से ही सरकारी गवाह बन गए और राम प्रसाद बिस्मिल, अशफाकउल्लाह खान आदि पकड़े गए। अठाराह महीने मुकदमा चला, 19 दिसंबर 1927

काकोरी
KAKORI
کاکوری

को इन्हें इस कांड के लिए फांसी पर लटका दिया गया। 1928 में गुमनाम जोशी अंग्रेज सरकार के हाथ चढ़गए, पकड़े गए 1932 में हिसार में एक वर्ष का कारावास। इसी सिलसिले में 1934 में तीन वर्ष का कारावास हुआ।

अब जोशाी जी 42 वर्ष के हो चुके थे। अपना सारा यौवन क्रांतिकारी गतिविधियों में गुजारा। अब आंदोलन चरम सीमा पर पहुंच रहा था। गरम क्रान्तिकारी विचारधारा नर्म धारा के आगे कमजोर पड़ने लगी थी। जोशी पर अभी भी सरकार की नजर थी ही। इसी बीच हिमाचल के कामरेड क्रांतिकारी भूप सिंह इन्हें अपने साथ जिला मंडी के लूणापानी ले आए। वहीं पर भूपसिंह ने इन्हें एक छोटा सा एक कमरे वाला मकान बना कर दिया। अब वे यहीं पर आकर रहने लगे थे। अंत में आर्य प्रतिनिधी सभा में काम करने लगे। जीवन के अंत तक सामाजिक कार्य में सक्रीय रहे। बल्ह किसानों की समस्या, उनके हल का झगड़ा स्वतंत्र भारत की सरकार से भी चलता रहा।

99 वर्ष आठ महीने के हुए तो आस पास के उनके जानने वालों में जिनमें नेर चैक से पं. ओम प्रकाश जी प्रमुख थे, उनका शतक जन्मदिन समारोह मनाने की तैयारी करने लगे। उपन्यासकार राजेश जोशी जब 89 वर्ष के हुए तो उन्होंने एक कविता लिखी थी,

मुझे ग्यराह रन और बनाने हैं,\
एक छक्का,एक चौका और एकल रन,
या दो चैके और तीन एकल रन,

परन्तु उन्होंने रन पूरे नहीं किए और आउट हो गए। इधर केवल चार महीने शेष थे शतक पूरा नहीं कर पाए जैसे कभी तेंदुलकर आउट हो जाता रहा कभी 99 पर या 98 पर , इधर भी केवल चार महीने रह गए थे शतक को पूरा करने में । जाओ सैनिक जाओ तुम्हें याद करते रहेंगे हिमाचल वासी, मंडी वासी।

अलविदा सैनिक तुम्हें हमारा प्रणाम

संपर्क – 9418001224

भारत में राष्ट्रीयता की भावना का विकास तब तक नहीं होगा, जब तक खान-पान एवं वैवाहिक संबंधों पर जातीय बंधन रहेंगे।

महात्मा जोतिबा फुले

आंखों पर पट्टी

जयपाल

धृतराष्ट्र तो उसी तरह जन्मांध थे
जिस तरह आम तौर पर राजा महाराजा हुआ ही करते हैं

लेकिन...
गांधारी, तुमने पट्टी क्यों न उतार फैंकी
क्यों न उतार फैंकी वह पट्टी
जो जानबूझकर उस समय की पितृसत्ता ने तुम्हारी आंखों पर बांधी थी

तुम्हारी आंखों के आगे तो अंधेरा था
पर बाहर जो महाअंधकार था
वह तुम देख न सकी
शायद तुम्हारी आंखों पर पट्टी भी
इसी वजह से बांधी गई थी

तुम्हारी आंखों पर पट्टी बांधी गई
ताकि द्रोपदी का चीर हरण किया जा सके
मारा जा सके अभिमन्यु को धोखे से
काट लिया जाए एकलव्य का अंगूठा
घोषित कर दिया जाए अर्जुन को सर्वश्रेष्ठ
सूर्यपुत्र को किया जाए लांछित
अश्वत्थामा को मार दिया जाए कपट से

गांधारी,अब वह पट्टी उतार कर फेंकने का वक्त आ गया है
ताकि तुम भी देख सको
कि तुम्हारे द्वारा आंखों पर पट्टी बांध लेने से
उस समय के समाज को क्या कीमत चुकानी पड़ी
आंखों पर पट्टी बांध कर जीना
खुद मर जाना होता है
अपने समय को मरने देना होता है
फिर बाद में
मर चुके समय को
श्राप देने का कोई अर्थ नहीं होता !

संपर्क - 9466610508

कटे अंगूठे की आवाज

विनोद कुमार

कटा अंगूठा
है लेता बोल
आती है
जंगल से आवाज

अचानक
पक्षियों का चहचाना
रुका सा जाता है
पेड़ों की पत्तियां
कांपने लगती है
भयानक आवाज
का कहराना
देता है सुनाई

जंगल की धरती
पड़ गई काली
टपका है लहू,
यहां
रहा लहू पुकार

प्रकृति की गोद में
पलता जंगल
गूंज रहा इसी ध्वनि से
प्रकाश की चमक
इस ध्वनि से टकराकर
हो जाती है तेज

धरती के गर्भ से,
निकली आवाज
लगी पूछने
है तू कौन, रहा जो चिल्लाय़
मैं वही

कटा है जिसका अंगूठा
हो रही है पीड़ा
इस दर्द से नहीं
उस दर्द से
जो गुरु से मिला

रहे हो किसे पुकार
बतलाते हो गुरु
जिसने कटा है अंगूठा
अपने ही शिष्य का
है वो कौन

वो है द्रोण
गुरु द्रोणाचार्य
जिसने युद्ध में,
प्रत्यंचा चढ़ाने से,
पहले ही
लिया अंगूठा मांग

किस वचन
से बंधे थे
राजा का बेटा राजा
क्या है ये सत्य
क्या यही थी
वजह

मैं रहा हूं भूल
इस अत्याचार को
मेरे बहे,
लहू के कतरे
पूछते रहेंगे
सदियों तक

क्या राज घरों के खूंटे से
बंधी रहेगी शिक्षा
क्या सदियों तक
मिलेंगे द्रोण
जो काट ले
अंगूठा प्रतिभा का
क्या नहीं हारेगा
कभी अर्जुन?

संपर्क - 8307805165

महमूद

योगेश

घोड़ा गाड़ियों से उठती
लाल धूल से अंटी उस दुपहरी में
भट्ठे की पक्की ईंटों के कच्चे मकानों से
थोड़ी दूर...
किनारे वाली डेक के नीचे
महमूद ने हरे-नीले चौकोर छापे वाली लूंगी संभाली
और एक कच्ची ईंट निकाली
घुटने फैलाए
और बैठ गया।
गर्दन टेढ़ी करके उसने
अपना सारा तजुर्बा इकट्ठा किया
और क्षणभर को,
मेरा चेहरा परखा
कुछ याद सा करते हुए धीमे स्वर में बोला
बाबूजी...
छोटे से थे हम
जब अपने घर से आए थे, बिहार से
अपने खेत छोड़कर।
मां साथ रखती थी बाबूजी,
गांव जाती सौदा पत्ता लेने तब भी
वो जो वहाँ हैं न; उस पीर पे प्रसाद मांगने जाती तब भी
ईंट पाथती तब भी।
इसी भट्ठे पर बढ़ा हुआ बाबूजी
जवानी भी सारी यहीं लुटाया हूं।
कुछ देर रुक कर
उसने मेरा चेहरा फिर जांचा
संतोष और विश्लेषण के मिश्रित भाव से बोला

जब मां के साथ होता था बाबूजी
तो इस नमकीन मिट्टी से मैं खिलौने बनाता था,
एक बार तो
हमने चिड़िया बनाई.... बड़ी चिड़िया
और चूल्हे में डाल दी...
उस चिड़िया के पंख आग में टूट गए बाबूजी।
पिताजी ने जब से ईंट बनाने सिखाए
बस तब से हम माहिर हो गए बाबूजी।
मैंने उसकी सारी कहानी में से
उसके 'हम' को पकड़ा
और आदतानुसार भाषा की भट्ठी में चिपका दिया
मुझे महसूस हुआ
यह शब्द बिल्कुल सटीक प्रयोग हुआ है
कोई व्याकरणिक दोष नहीं
यह महमूद अकेला महमूद थोड़ी है।
इतने में महमूद उठने लगा
उठते उठते थके स्वर में बोला
परिवार के बारे में पूछ रहे थे बाबूजी,
वह हमारी औरत है
पीली साड़ी में
और वह मेरा लड़का है बाबूजी
वह जो खिलौना बना रहा है।

संपर्क - 9896957994

एक किन्नर बच्चे का संघर्ष

साहिब सिंह

मेरा पैदा होना ही एक श्राप लगा
मैं घरवालों को पुन्य नहीं पाप लगा
ताने सहने पड़े जब थोड़ा सा बड़ा हुआ

सारा मोहल्ला मेरे अस्तित्व के ख़िलाफ़ खड़ा हुआ
नाम लिखवाने गए पिता तो पूछा टीचर ने
कुछ अजीब से दिखते हैं इसके फीचर से
लड़की लगता है ना ही लड़का ही
ना तो कमज़ोर दिखता है ना ही तगड़ा ही
पिता जी ने चुपके से कहा, यह वही तो है जो प्रकृति ने रचा
जैसे तैसे करके मेरा नाम लिखवाया गया
पर किसी को वो नमकीन, किसी को मीठा लगा
बात बात पर साथी चिढ़ाते हैं
मेरे हुनर को भी मेरी कमज़ोरी बताते हैं
पर मैं किसी से भी डरने वाला नहीं हूं
मैं बिगड़े हालातों से मरने वाला नहीं हूं
पंख टूट ग ए हैं तो कोई बात नहीं है
हवा रोक दे हौंसला औकात नहीं है
अध्यापकों को चाहिए साथ देना
पर मुझे पड़ रहा है उनका ताप सहना
धारा विपरीत है तो कोई बात नहीं है
चल पड़ूंगा अकेला गर कोई साथ नहीं है
लोग कहते हैं कि अकेला चना भाड़ नहीं फोड़ सकता
पर मैं निक्कमेपन की चादर नहीं ओढ़ सकता
चलता ही रहूंगा कर्तव्यपथ पर अविरत
यही है मेरा काबा और यही मेरा तीर्थ
माना मेरे मार्ग में कांटे ही कांटे हैं
और समाज ने ये सिर्फ़ मुझे ही बांटें हैं
पर मैं कांटे से कांटा निकालूंगा
और एक न एक दिन अपना लक्ष्य पा लूंगा

धर्म क्या है?

जवहार लाल नेहरू

हिंदूस्तान सब बातों से ज्यादा, धार्मिक देश समझा जाता है. और हिन्दू मुसलमान, सिक्ख तथा दूसरे दूसरे लोग अपने-अपने मतों का अभिमान रखते हैं और एक-दूसरे के सिर फोड़कर के उनकी सचाई का सबूत देते हैं। हिन्दुस्तान में और दूसरे देशों में मजहब के और कम-से-कम मौजूदा रूप में संगठित मजहब के दृश्य ने मुझे भयभीत कर दिया है। मैंने उसकी कई इय कन्दा की है, और उसको जड़मूल से मिटा देने की इच्छा का न है। मुझे तो लगभग हमेशा यही मालूम हुआ कि अन्धविश्वकरी -। और प्रगतिविरोध, जड़ (प्रमाण-रहित) सिद्धान्त और कट्टरपन, अन्धश्रद्धा और शोषण नीति और (न्याय अथवा अन्याय से) स्थापित स्वार्थों के सरंक्षण का ही नाम 'धर्म' है। मगर यह भी मुझे अच्छी तरह मालूम है कि धर्म में और भी कुछ है, उसमें कुछ ऐसी चीज़ भी है, जो मनुष्यों की गहरी आन्तरिक आकांक्षा भी पूरा करती है। नहीं तो उसका इतनी ज़बरदस्त शक्ति बनना, जैसा कि बना हुआ है, कैसे सम्भव था? और उससे अनगिनत पीड़ित आत्माओं को सुख और शान्ति कैसे मिल सकती थी? - क्या वह वैसी ही शान्ति थी जैसी खुले समुद्र के तूफानों से बचकर किसी बन्दरगाह में मिलती है, या उससे कुछ ज़्यादा थी, कुछ बातों में तो सचमुच वह इससे कुछ ज़्यादा ही थी।

लेकिन इसका भूतकाल कैसा भी रहा हो, आजकल का संगठित धर्म तो ज़्यादातर एक खाली खोल ही रह गया है, जिसके अन्दर कोई तथ्य और तत्त्व नहीं है। श्री जी.के. चेस्टरन ने इसकी (स्वयं अपने विशेष धर्म की नहीं, मगर दूसरों के धर्म की) उपमा भूगर्भ में पाए जानेवाले किसी ऐसे जानवर या प्राणी के पाषाणखचित ढाँचे से दी है जिसके अन्दर से उसका अपना जीवन-तत्त्व तो पूरी तरह से निकल चुका है, लेकिन ऊपरी पंजर इसलिए रह गया है कि उसके अन्दर कोई बिलकुल दूसरी ही चीज भर दी गयी थी। और अगर किसी धर्म में कोई महत्त्वपूर्णचीज रह भी गयी है तो उस पर दूसरी अन्य हानिकारक चीजों का लेप चढ़ गया है।

मेरी कहानी से...

डॉक्टर आंबेडकर से मेरी भेंट

सन्तराम बी.ए.

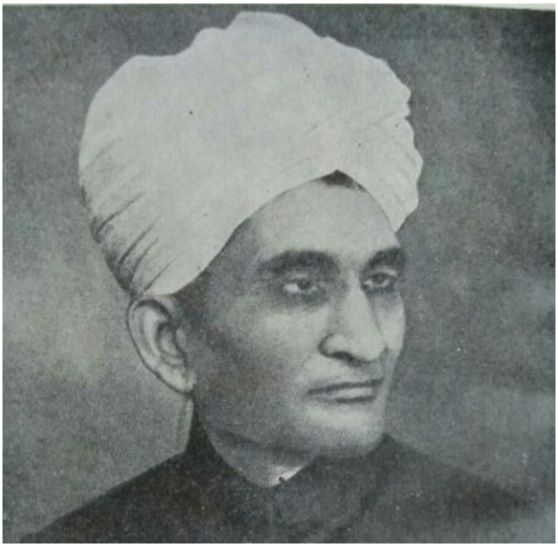

किसी विद्वान का व्याख्यान सुनने से या उसकी पुस्तक पढ़ने से जितना फायदा होता है उससे कहीं ज्यादा उस के सत्संग से होता है इसलिए हमारे यहां सत्संग की बहुत महिमा बताई गई है। व्याख्यान मूसलाधार वर्षा की भान्ति है। जैसे वर्षा के पानी का बहुत थोड़ा हिस्सा जमीन चूस लेती है और ज्यादा हिस्सा भूमि पर रह कर निचान की ओर बह जाता है इस प्रकार व्याख्यान अथवा भाषण की अधिकतर बातें सुनने वाले के दिल में दाखिल न होकर एक कान से दूसरे कान के रास्ते बाहर निकल जाती हैं। पुस्तक के अध्ययन से भी कई संदेह वैसे के वैसे बने रह जाते हैं परन्तु जब हम किसी विद्वान से भेंट करके बातचीत करते हैं तो उसकी बातें धीरे-धीरे बरसने वाले बादल की बूंदों की भान्ति हमारी अन्तरात्मा में पहुंचती जाती हैं। इस प्रकार हम उतनी ही दिमागी खुराक खा लेते हैं जितनी हम पचा सकते हैं। आपसी बातचीत से हम किसी भी विद्वान की विद्वत्ता से पूरा लाभ उठा सकते हैं। अपने संदेहों को अच्छी तरह दूर कर सकते हैं किसी गुरु, साधु, सन्त, महात्मा या विद्वान का केवल दर्शन करना फ़ज़ूल है यदि उससे खुल कर बातचीत न की जा सके। मेरा स्वभाव सा

बन गया है कि यदि किसी महात्मा, स्वामी या विद्वान से बहस की आशा न हो तो केवल उसे देखकर केवल दर्शन के लिए उस के पास जाना पसन्द नहीं करता हूं!

भारत सरकार के भूतपूर्व कानून मंत्री डॉक्टर भीमराव आंबेडकर पहुंचे हुए महात्मा भले ही न हो परन्तु उनकी सागर समान अथाह विद्वता में तो किसी को सन्देह ही नहीं हो सकता। मैं जब जब उनसे मिला हूं मेरे ज्ञान में कुछ न कुछ वृद्धि ही हुई है। इसलिए जब भी मुझे उनसे मिलने का मौका मिलता था मैं हमेशा इससे फायदा उठाने की कोशिश करता था। पिछली 8 फरवरी, 1949 को दिल्ली में उनसे भेंट करने का मौका मिला था। उनसे दिल खोल कर बातचीत करने पर मुझे बहुत आनन्द मिला और प्रसन्नता हुई। मैं इस भेंट का संक्षिप्त विवरण पाठकों के लाभ के लिए निम्न में दे रहा हूँ।

उन दिनों डॉक्टर साहेब इण्डिया गेट के नजदीक हार्डिंग एविनियु पर एक नम्बर कोठी पर रहते थे। मैं पुरानी दिल्ली मकान नम्बर 2512 तेलीवाड़ा में ठहरा हुआ था। इन दोनों जगहों में कोई चार मील का फासला है। डॉक्टर साहेब ने मेहरबानी कर के मुझे बुला लाने के लिए एक सज्जन सोहन लाल शास्त्री को मेरे निवास स्थान तेलीवाड़ा भेजा में लगभग सवा सात बजे शाम को उनकी कोठी पर जा पहुंचा। उस समय उनके पास उनकी पत्नी,विश्व बन्धु शास्त्री और इंग्लैंड से अभी-अभी लौटे दो अन्य सज्जन भी बैठे हुए थे। पति-पत्नी दोनों को नमस्कार कर मैं भी वहां बैठ गया। मैंने उन दिनों जाति-भेद पर 'हमारा समाज' नामक एक हिन्दी पुस्तक लिखी थी। इस पर मैं डॉक्टर साहेब की राय जानना चाहता था। इसलिए पहले जाति-पाति पर ही बात चली जाति-पांति की हानियां बतलाते हुए डॉक्टर साहेब ने कहा कि अपने खानदान के साथ स्नेह होना आदमी के लिए कुदरती है। यह हर देश और जाति में पाया जाता है। एक जर्मन अपने परिवार के साथ विशेष स्नेह रखता है, परन्तु इस के बाद सब जर्मन उसके लिए बराबर हैं। वह जर्मन जाति को समान दृष्टि से देखता है। परन्तु भारत के हिन्दुओं में ऐसी बात नहीं है। हिन्दू सब से पहले अपने बहन भाईयों, सन्तान और परिवार से प्रेम करता है। इस के बाद उस के प्रेम के पात्र केवल उस की अपनी बिरादरी ही होती है। परिवार और बिरादरी को प्रेम बांटने के बाद उस में जो प्रेम बचता है वह उस की जाति को मिलता है। इस के बाद उस के साम्प्रदाय और मज़हब वालों की बारी आती है। बस एक हिन्दू का प्रेम यहां तक पहुंचते-पहुंचते समाप्त हो जाता है। देश को देने के लिए उस के पास कुछ शेष नहीं होता। वही कारण है कि भारतवासियों में सच्चे देश प्रेम का खजाना असीमित नहीं होता। यही कारण है कि भारतवासियों में सच्चे देश प्रेम की हर तरह से कमी है। इन में जाति और बिरादरी के प्रेम का ही जोर है। इसलिए जब तक जाति-पांति को न मिटाया जाएगा भारत में दूसरे देशों की भान्ति प्रबल देश भक्ति का पैदा होना असम्भव है।

इसी संबंध में उन्होंने एक बड़ी महत्त्वपूर्ण बात की। आपने कहा कि किसी चीज या जायदाद की मिलकियत व्यक्ति के दृष्टिकोण को संकीर्ण और तंगदिल कर देती है ऐसे व्यक्ति की विचारधारा हमेशा इस जायदाद के साथ ही लिपटी रहती है। ऐसा व्यक्ति कभी उदार चित नहीं हो सकता। वह सार्वभौमिक दृष्टि नहीं रख सकता। भगवान बुद्ध ने अपने भिक्खुओं को संसार के सामने एक आदर्श कायम करने के लिए तैयार किया था। भगवान भली भांति जानते थे कि गृहस्थी के लिए धन सम्पत्ति में लिपटा रहना अनिवार्य बन जाता है। किसी भी गृहस्थी का सम्पत्ति का स्वामी या मालिक बन जाने पर उस का दृष्टिकोण सार्वभौमिक बनना असम्भव है किन्तु जब इन गृहस्थीयों के सामने तीन वस्त्रधारी सर्वस्व त्याग करने वाले त्यागी भिक्खु आदर्श रूप में मौजूद रहेंगे, उन्हें देख कर गृहस्थी भी मोह माया और स्वार्थ में बहुत ज्यादा डूबने से बचते रहेंगे। भिक्खु को निजी जायदाद कुछ नहीं होती इसलिए उसका हृदय अतिविशाल और उसका दृष्टिकोण सार्वभौमिक हो जाता है। वह सभी के साथ रह सकता है। भिक्खु का ऐसा आदर्श सामने रहने पर लोगों में धन दौलत के लिए अधिक झगड़ा होने की संभावना कम हो जाती है और उन में स्वार्थ और अन्याय की मात्रा में भी कमी आ जाती है। इसके विपरीत चार वर्णों के विभाजन में ब्राह्मण स्वयं ही विधान (कानून) बनाने वाला था। इसलिए उसने अपने स्वार्थ की पूर्ति के लिए अपने को सबसे श्रेष्ठ ठहराया और दूसरों को अपने से घटिया ठहराया। संसार की सारी चीजों का मुख्य तथा प्रथम अधिकारी ब्राह्मण को ही कहा और यहां तक शास्त्रों में घोषित कर दिया कि सारा संसार ब्राह्मण का दिया ही खाते हैं। यह जगत् परमात्मा ने ब्राह्मण के लिए ही पैदा किया है। शूद्रों के लिए स्मृतियों में जो कानून और धर्मादेश ब्राह्मणों ने बनाए हैं, वह अत्यन्त अन्यायकारी और अत्याचार पूर्ण हैं। ऐसे कानून, गृहस्थ को त्याग करने वाला कोई भी भिक्खु नहीं बन सकता था। यह ठीक है कि बराबरी संसार में कहीं नहीं है। नाबराबरी सब कहीं देखने में आती है। किन्तु ऐसी नाबराबरी को या जन्म से ही ऊंच-नीच को धर्म या धर्मशास्त्रों में बनाए कानूनों को ब्राह्मण के सिवा संसार के किसी धर्म में नहीं दी है। मुसलमान और ईसाइयों में भी आपसी नाबराबरी देखी जा सकती है किन्तु यह ऐसी सामाजिक नाबराबरी को सामाजिक बुराई समझते हैं हिन्दुओं की तरह उसे अपने धर्म का अंग नहीं समझते। आप ने बतलाया कि अभी "फ्री प्रेस जर्नल" नामक बम्बई के एक समाचार पत्र में एक यूरोपियन का लेख छपा है। उस में लेखक ने कहा है कि भारत की यद्यपि आज़ादी मिल गई है किन्तु उस का भविष्य अन्धकारमय है। कारण उसने यह बताया है कि भारतवासियों में अपनी सामाजिक बुराईयां या दोष दूर करने का कुछ भी जोश या उत्साह नहीं है। उसका कहना है कि जो देश अपने समाज की बुराइयों और त्रुटियों को दूर करने पर ध्यान नहीं देता, वह कभी भी बहुत समय तक आज़ाद और खुशहाल नहीं रह सकता।

उस समय इंग्लैंड से ताजा लौटे एक व्यक्ति ने वहां फिलस्तीन में यहूदियों की बात छेड़ दी। मैंने कहा कि हिटलर की तबाही की एक वजह इसका यहूदियों से ईर्ष्या और हिन्दुओं की तरह शुद्ध आर्य खून का झूठा घमण्ड भी था। मेरा मत था कि अगर वह यहूदियों को जर्मन से न निकालता तो परमाणु बम का गुप्त भेद शायद अमेरिका को मालूम न होता। यह सुनकर डॉक्टर साहेब बोले यहूदियों के खिलाफ होने की हिटलर की एक वजह यह भी थी कि इसाई लोग शुरू से ही यहूदियों पर जुल्म करते आ रहे हैं। पोप का फतवा था कि यहूदियों को भारतवासी शूद्रों की तरह जमीन और जायदाद का मालिक होने का अधिकार न दिया जाए। यह लोग ईसाइयों के साथ उनकी गली मुहल्लों में नहीं रह सकते थे और न ही सेना में भर्ती हो सकते थे। वह अलग-अलग बस्तियों जिन्हें घेटू कहते थे में रहते थे। इनके लिए कानून तथा सामाजिक शान्ति और व्यवस्था की नौकरियों का द्वार बन्द था, इसलिए वह लोग व्यापार करने पर मजबूर हुए स्कूलों और विश्वविद्यालयों में घुस गए। जैसे किसी व्यक्ति का एक अंग निकम्मा हो जाए तो दूसरा अंग मजबूत हो जाता है। जो व्यक्ति अन्धा हो जाता है उसकी याद्दाश्त बहुत बढ़ जाती है। इसी प्रकार यहूदियों की मानसिक शक्ति व्यापार और विज्ञान में बहुत चमक उठी। उनमें बड़े-बड़े वैज्ञानिक और करोड़पति पैदा हो गए। दूसरी और प्रथम महायुद्ध की समाप्ति पर जब संयुक्त राष्ट्रों ने जर्मन को सेना तोड़ देने का आदेश दिया तो बहुत से लोग जो सेना में भर्ती थे बेकार हो गये। जब उन्होंने व्यापार शिक्षा विभागों और दूसरे छोटे-बड़े पेशों में घुसने की कोशिश की तो वहां पहले ही यहूदियों को भरा पड़ा पाया। उनके लिए वहां कोई खाली स्थान ही नहीं था। ऐसा जानकर जर्मनी का यहूदियों के विरुद्ध ईर्ष्या तथा द्वेष उमड़ पड़ा। यहूदियों में छुपी हुई योग्यता शक्ति का वर्णन करते हुए डॉक्टर साहेब ने कहा कि तब तक लोग यहूदियों को डरपोक और लोभी बनिया ही समझा करते थे, किन्तु फिलस्तीन में उन्होंने अरबों और मिस्र वालों के दांत खट्टे करके अपनी बहादुरी का भी सिक्का बिठा दिया है। फिलस्तीन जब तक मुसलमान अरबों के कब्जे में रहा, तब तक वह केवल ऊबड़-खाबड़, वीरान, बंजर और गन्दा ही रहा। अब यहूदियों ने धन, परिश्रम और बुद्धि बल से उसी फिलस्तीन को एक आकर्षक और सुन्दर जगह बना दिया है। अब वहां फलों से लदे बाग खड़े हैं। हरी-भरी खेतियां लहरा रही हैं और शानदार इमारतें खड़ी हैं। ऐसा करके यहूदियों ने साबित कर दिया है कि वह केवल व्यापार में माहिर जाति ही नहीं बल्कि उनमें हर प्रकार की योग्यता है।

यहूदियों के बाद अमेरिका के नीग्रो (हब्शी) की बात चल पड़ी। इस पर डॉक्टर साहेब बोले कि भारत में अब सवर्ण जाति हिन्दू अछूतों की भलाई के लिए ध्यान देने लगे हैं। इससे कहीं ज्यादा अमरीकन नीग्रो लोगों के लिए महसूस करते हैं। भारत में तो आशा की जा सकती है कि कभी न कभी अछूत मिल खप कर हिन्दुओं के साथ एक हो जाएंगे किन्तु नीग्रों

और गोरे आदमी का रंग रूप और सूरत में इतना गहरा अन्तर है कि इनका आपस में मिल कर एक हो जाना मुमकिन नहीं मालूम होता। इस बात को जानकर कई अमीर अमरीकन अरबों-खरबों रुपया नीग्रो लोगों को इस शर्त पर देने के लिए तैयार है कि वह अमेरिका छोड़ जाएं और अफ्रीका में जाकर अपनी बस्तियां बसा लें और आजादी के साथ मौज से रहें। किन्तु नीग्रो लोगों को अमेरिका की ऐश व अशरत की जिन्दगी का ऐसा चस्का लग चुका है कि वह अमेरिका को छोड़ना नहीं चाहते। अमेरिका की साफ सुन्दर सड़कें, सुन्दर महल बाड़ियां, होटल, सिनेमा घर, नाच- कूद और शराब, इन सब ने इनके दिलों में गहरा स्थान बना लिया है। वह इन चीजों के नशे में इतने डूब चुके हैं कि किसी भी कीमत पर अमेरिका छोड़ने के लिए राजी नहीं हैं नीग्रो सब कंगाल ही नहीं हैं, इनमें बड़े-बड़े अमीर और विद्वान भी हैं। इनमें दिन-ब-दिन विद्या का शौक भी बढ़ रहा है। बातों-बातों में डॉक्टर साहेब ने एक नीग्रो पति-पत्नी के बारे में बतलाया कि उन दोनों का विद्या हासिल करने का बहुत शौक था। उनके पास खर्च चलाने के लिए पैसा नहीं था इसलिए विश्वविद्यालय टर्म में पति मेहनत करके कुछ कमा कर घर का खर्च चलाता था और पत्नी शिक्षा पाती थी और फिर दूसरी टर्म में पत्नी मेहनत करके, कुछ कमाती थी और पति कालेज में पढ़ता था। डॉक्टर साहेब ने कहा कि मैंने कई एक नीग्रो नेताओं को सलाह दी थी कि वह सब एकत्र होकर अमेरिका की एक दो रियासतों में बस जाएं। ऐसी रियासतों में उनके अपने गवर्नर, अपने प्रधानमंत्री, अपने विश्वविद्यालय आदि सब उनके अपने होंगे। यहां उन्हें नीच समझ कर उनका कोई दूसरा अपमान नहीं कर सकेगा। इसके सिवा उनकी उन्नति का और कोई रास्ता नहीं सूझता।

तब हिन्दू कोड बिल पर चर्चा चली। मैंने कहा कि इस के बिल का इतना विरोध हो रहा है क्या आप आशा करते हैं कि यह बिल पास हो जाएगा? डॉक्टर साहेब ने जवाब दिया कि इस बिल का इतना वास्तविक विरोध नहीं है जितना बनावटी है। कुछ करोड़पति मारवाड़ी सेठ धन देते हैं और उनके घन से प्रैस और प्लेटफार्म पर उनके एजेन्ट प्रचार करते हैं। धन के बल पर उन्होंने प्रेस को खरीद लिया है। भला एक ही एजेन्सी सब कहीं क्यों प्रोपेगन्डा करती फिर रही है। यह बिल पिछले दस बरसों से लटकता चला आ रहा है। मैंने देखा है कि कई व्यक्ति जब वह मन्त्री ये तब इस बिल को पास कराने के लिए बहुत शीघ्रता दिखा रहे थे, किन्तु अब मन्त्री पदों से हट जाने पर वह विरोधियों से मिलकर इसे लटकाए रखना चाहते हैं। भारत को यदि ऐसा आजाद और सेकुलर देश बनना है कि जिसका किसी दीन-धर्म के साथ सम्बंध नहीं तो उसे संसार के दूसरे आजाद देशों की भांति अपने सामाजिक कानूनों में वर्तमान युग के अनुसार संशोधन करना जरूरी है। बीसवीं सदी में मनु के बनाए हुए कानूनों से चिपके रहकर हम कभी आगे नहीं बढ़ सकते। हमारे देश का कल्याण इसी में है कि हम पुरानी स्मृतियों की वही बातें स्वीकार करें जो वर्तमान युग में परिवर्तित परिस्थितियों में हमारे

लिए लाभदायक हैं और जो बातें निरर्थक और व्यर्थ सिद्ध हो रही हैं उन्हें पुराने गले-सड़े कपड़े की तरह परे फेंक दें। जो आदमी बढ़ना तो आगे चाहता है किन्तु देखता पीछे है। उस का ठोकरें खाकर गिरना अनिवार्य है।

इस समय मैंने हंसी मज़ाक में कहा कि "डॉक्टर साहेब ! क्या आप अपने आप को अपने पुरखाओं से अधिक बुद्धिमान समझते हैं? क्या आपके बाप दादा बुद्धिहीन थे?"

डॉक्टर साहेब झट बोले, "निस्संदेह, मैं अपने बाप दादा से दो सौ गुना युग और अपने परदादा से तीस हजार गुना अधिक बुद्धिमान हूँ। उनके के पश्चात् संसार विद्या, विज्ञान और कला-कौशल एवं उद्योग-धंधों में अद्भुत उन्नति की है। किन्तु इसका कदापि यह मतलब नहीं कि मेरे मन में अपने पूर्वजों के लिए आदर-सम्मान नहीं है।"

डॉक्टर साहेब ने कहा कि एक बार एक व्यक्ति ने मुझ से पूछा कि आप अंग्रेजी ढंग का लिबास क्यों पहनते हैं? अपने पूर्वजों के ढंग का लिबास छोड़कर अंग्रेजी ढंग का लिबास पहनने की क्या जरूरत है? इस पर मैंने उसे उत्तर दे दिया था कि मैं अपने लिबास में किस पूर्वज की नकल करूं? हमारा लिबास सब युगों में एक समान कभी नहीं रहा। दूसरी अन्य बातों की तरह हमारे लिबास में भी परिवर्तन आया है और तरक्की करते-करते आज वह इस सुधरी हुई हालत में पहुंचा है। विवाह की संस्था को ही लीजिए। पुराने इतिहास से पता चलता है कि हमारे देश में एक युग ऐसा भी था जब बहन-भाई और बाप-बेटी का भी विवाह सम्बंध हो जाता था। परन्तु आज इस बात को महापाप समझा जाता है। जो लोग आज हिन्दू कोड बिल का विरोध करते हैं, वह किसी भी तर्क अथवा दलील का सहारा न लेकर केवल भावना में वह जाते हैं, वह एक ओर तो कहते हैं कि स्त्री को जायदाद की मालकिन होने का अधिकार नहीं होना चाहिए, क्योंकि उस में जायदाद का प्रबन्ध करने की ताकत नहीं है। किन्तु उसके साथ ही कहते हैं कि "स्त्रीधन" उसकी निजी जायदाद होना चाहिए। स्त्रीधन पर ससुराल वालों का कोई अधिकार नहीं होना चाहिए। ऐसे लोगों से पूछा जा सकता है कि यदि स्त्री में अपना स्त्रीधन संभालने की काबलियत है तो वह फिर दूसरी जायदाद का प्रबन्ध क्यों नहीं कर सकती।

इस प्रकार बातें करते-करते रात के नौ बज गए। डॉक्टर साहेब को भोजन करना था और मुझे वापस तेलीवाड़ा अपने निवास पर पहुंचना था। दस बजे के बाद वहां से बस का मिलना भी मुश्किल था, इसलिए मैं न चाहता हुआ भी उन से विदाई लेकर चला आया।

शिक्षा व्यवस्था की हकीकत को बेपर्दा करती प्रोफ़ेसर की डायरी

रानी वत्स

डा. लक्ष्मण यादव द्वारा लिखित पुस्तक ‘ प्रोफेसर की डायरी’ शिक्षा व्यवस्था व एडहॉक की नौकरी की व्यवस्था को समझने में बहुत मदद करती है । यह पुस्तक जरूर पढ़नी चाहिए। कैसे एक शिक्षक से शिक्षा के अलावा सभी काम करवाये जाते हैं। यह पुस्तक शिक्षा व्यवस्था के चरमराने का पर्दाफाश करती है। ‘हमारा देश किस दिशा में जा रहा है’ इससे लेखक का गहरा सरोकार है। व्यकित सोचता है कि परमानेंट नौकरी मिल जाये तो वह कुछ नया सोच सकता है पर उसको इतने ऐसे कामों में उलझाया जाता हैं कि वह छात्रों को पढ़ा न सके। जो एडहॉक पर नौकरी कर रहे हैं वो इसी उलझन में उलझ रहे हैं कि कब पक्की नौकरी मिलेगी और कब इंटरव्यू देने से छुटकारा मिलेगा। कितना मुश्किल होता है उस पाँच मिनट के समय मे अपने आपको काबिल बता पाना जिसमें यह भी पता होता है कि सलेक्शन की लिस्ट पहले ही तैयार हो चुकी है । व्यक्ति इसी उलझन को ही सुलझाता रह जाता है। एक नेता, एक ठेकेदार या शिक्षा माफिया के धंधे में भाड़े पर रखे गए गुरु इस देश को विश्वगुरु बना रहे हैं

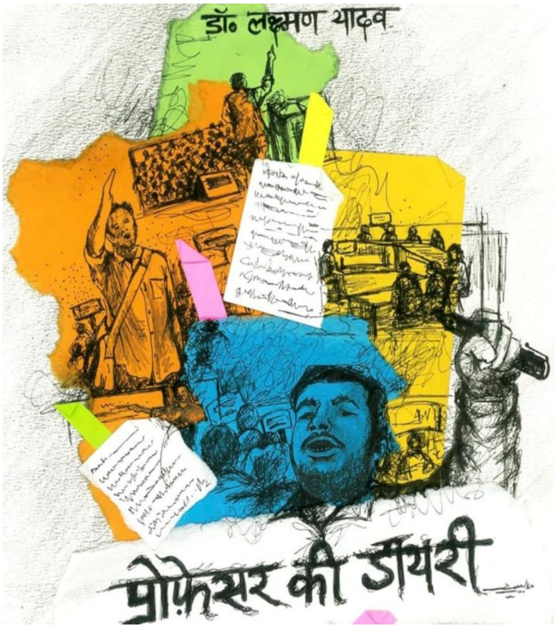

यह आज के विश्वगुरु की सच्चाई है। मनुष्य नौकरी लगने के बाद कितने अरमान लगाकर रखता है पर इंटरव्यू देने की भागदौड़ में वह किन-किन चीजों का सामना करता है। एडहॉक व परमानेंट से एक वाकया ओर जुड़ा है। हमारे जीवन के कितने फ़ैसले ऐसे होते है जो हमारी नौकरी से जुड़े होते हैं। कहते हैं कि शादी एक बार ही होती है, कितने अरमान सजा रखे थे मगर ऐसी शादी होगी कभी सोचा नहीं था। मेरी सलाह याद रखना या तो परमानेंट होकर शादी करवाना या फिर छुट्टियों में।

आप जैसे लोग बचेंगे तो हमें भी बचा लेंगे। भगतसिंह कोई एडहॉक थोड़े न थे, उन्हें कोई ईएमआई की किश्त नहीं भरनी होती थी, उनके बीवी बच्चे भी नहीं थे। उन्होंने भी तो देश के लिए कुर्बानी दी थी। शिक्षा का क्षेत्र बहुत व्यापक है। परिवार, स्कूल, कॉलेज से लेकर विश्वविद्यालयों तक फैला हुआ। हर अस्थायी शिक्षक की दास्तान हू-बू-हू ऐसी नहीं होगी पर किसी महिला शिक्षिका के किस्से इससे कहीं ज्यादा त्रासद होंगे।

कैरियर ओर मातृत्व में से अगर किसी महिला को चुनना पड़ जाए तो वह मातृत्व को चुनेगी। यह समस्या उन महिलाओं के साथ आती है जो अस्थायी नौकरी पर लगी होती हैं क्योंकि उनको मेट्रनिटी छुट्टियां नहीं मिलती हैं। इसी बीच में एक भावुक वाकया आता है जिसमें अर्पणा कहती है कि "मैंने एक बहुत बड़ी गलती कर दी कि मैंने माँ बनने का ख्वाब देख लिया।"

विमला को एडहॉक से परमानेंट होने के लिए टी आई सी ने कहा कि आज रात यहीं रुक जाना। जब टी आई सी की बात नहीं मानी गई तो इन सबमें विमला की नौकरी तो चली गई, मगर वह जो कुछ अपने साथ बचाकर ले जा सकती थी, लेकर अपने पति के घर में गृहिणी बनने मुंबई चली गई। फिर न विमला लौटी और न उसका किस्सा।

पुस्तक में शिक्षा व्यवस्था से सम्बंधित बहुत सारे अध्याय हैं जिनमें शिक्षा के बदलते स्वरूप को बहुत ही शानदार तरीके से दर्शाया गया है। कैसे निजीकरण बढ़ रहा है, पक्की नौकरी पाने के लिए क्या- क्या प्रयास करना पड़ता है। यह एक शिक्षक के साथ-साथ उच्च शिक्षा की भी कहानी है। विश्वविद्यालय ज्ञान और धोखे की जटिल जगह है। विश्विद्यालय सिखाता है, नियंत्रित करता है और हेर-फेर भी करता है। इस पुस्तक को पढ़ते- पढ़ते जब अंतिम अध्याय में आते हैं तो वह बहुत विचलित कर देता है क्योंकि जब चौदह साल नौकरी करने वाले प्रोफेसर को नौकरी से निकाल दिया जाए तो उस समय उस पर क्या बीती होगी "लगभग चौदह साल पढ़ाने के बाद मुझे मेरे कॉलेज से निकाल दिया गया। मुझसे मेरी धड़कन छीन ली गई। परिंदे से उसका शज़र नहीं छीनना चाहिए।"

संपर्क - 8053183352

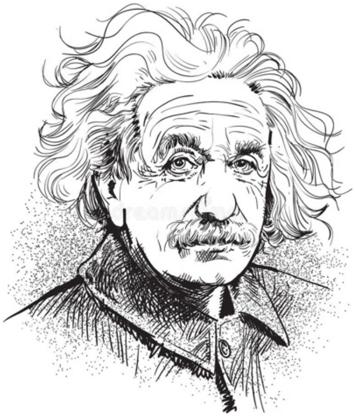

आइंस्टीन के पत्र

अनुवाद – संजय कुंदन

इस पत्र पर आइंस्टीन के अलावा अन्य कई गणमान्य व्यक्तियों के हस्ताक्षर थे। यह पत्र 2 दिसंबर 1948 को लिखा गया और 4 दिसंबर 1948 को प्रकाशित हुआ।

न्यूयॉर्क टाइम्स के संपादकों के लिए हमारे समय की सबसे तकलीफदेह राजनीतिक घटनाओं में से एक है इजरायल के नव स्थापित राज्य में फ्रीडम (हेरूत) पार्टी का उदय। यह एक ऐसा राजनीतिक दल है से अपने संगठन, तौर-तरीकों, राजनीतिक दर्शन और सामाजिक अपील में नाजी और फासिस्ट पार्टियों के समान है। इस पाटी का गठन फिलीस्तीन के एक आतंकवादी, दक्षिणपंथी और अंधराष्ट्रवादी संगठन रह चुके इरगुन जवई लेउमी के सदस्यों और समर्थकों द्वारा किया गया है।

इस पार्टी के नेता मेनकेम बेगिन की संयुक्त राज्य अमेरिका की वर्तमान यात्रा का मकसद स्पष्टतया आगामी इजरायली चुनावों में अपनी पार्टी के प्रति अमेरिकी समर्थन को दर्शाना और अमेरिका में रूढ़िवादी यहूदीवादी तत्त्वों के साथ राजनीतिक संबंधों को मजबूत करना है। कई राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त अमेरिकी उनकी यात्रा का स्वागत कर रहे हैं। वैसे यह अकल्पनीय है कि दुनिया भर में फासीवाद का विरोध करने वाले लोग बेगिन की राजनीतिक गतिविधियों और दृष्टिकोण के बारे में सही जानकारी मिलने के बाद भी उस आंदोलन को अपना समर्थन दें, जिसका श्री बेगिन प्रतिनिधित्व करते हैं।

उन्हें दी जाने वाली आर्थिक मदद और उनकी शोशेबाजी से जनता में भ्रम फैल सकता है कि अमेरिका का एक बड़ा तबका इजरायल के फासीवादियों के साथ है। यह बेहद नुकसानदेह होगा। इस भारी नुकसान से पहले ही अमेरिकियों को बेगिन के इरादों और उनके आंदोलन के बारे में बताया जाना चाहिए।

बेगिन की पार्टी की सार्वजनिक घोषणाओं से उसके वास्तविक चरित्र का पता नहीं चलता। आज वे लोग स्वतंत्रता, जनतंत्र और साम्राज्यवाद विरोध की बातें कर रहे हैं, जबकि हाल तक वे खुलेआम एक फासीवादी राज्य की वकालत कर रहे थे। इस आतंकवादी पार्टी

के व्यवहार से ही इसका सही चरित्र सामने आता है। इसकी पिछली हरकतों के आधार पर अनुमान लगाया जा सकता है कि यह भविष्य में क्या कर सकती है।

अरबी गांव पर हमला

एक अरबी गांव देर यासिन के साथ उन्होंने जो किया, वह खौफनाक है। मुख्य सड़कों से दूर और यहूदी इलाकों से घिरे इस गांव ने कभी युद्ध में हिस्सा नहीं लिया था और यहां तक कि ग्रामवासियों ने उन अरबी गिरोहों से भी लड़ाई की थी, जो गांव को अपने अड्डे के रूप में इस्तेमाल करना चाहते थे। 9 अप्रैल (न्यूयॉर्क टाइम्स) को आतंकवादी समूहों ने इस शांतिप्रिय गांव पर बिना किसी वजह के हमला किया और इसके अधिकतर निवासियों (240 पुरुषों महिलाओं और बच्चों) को मार डाला और उनमें से कुछ को बंदी के रूप में यरूशलम की सड़कों पर परेड़ कराने के लिए जीवित रखा। ज्यादातर यहूदी समुदाय इस कृत्य से भयभीत थे और यहूदी एजेंसी ने ट्रांस-जॉर्डन के राजा अब्दुल्ला को माफी का एक टेलीग्राम भेजा। लेकिन आतंकवादी अपने कृत्य पर शर्मिंदा होने के बजाय इस नरसंहार पर गर्व कर रहे थे। उन्होंने इसे व्यापक रूप से प्रचारित किया और देश में मौजूद सभी विदेशी संवाददाताओं को देर यासिन में लाशों के ढेर और चारों तरफ फैले आतंक के मंजर को देखने के लिए आमंत्रित किया।

देर यासिन की घटना फ्रीडम पार्टी के चरित्र और कृत्यों की एक मिसाल है। पार्टी ने यहूदी समुदाय के बीच अति राष्ट्रवाद, धार्मिक रहस्यवाद और नस्लीय श्रेष्ठता का मिश्रण प्रचारित किया है। दूसरे फासीवादी दलों की तरह उसका भी इस्तेमाल हड़ताल खत्म कराने किया गया है। उन्होंने इटली के फासीवादी मॉडल वाले कॉरपोरेट संघों को इन श्रम संघों के विकल्प के तौर पर किया है।

पिछले कुछ वर्षों के छिटपुट ब्रिटिश विरोधी हिंसा के दौरान आईजेडएल और अन्य उग्रवादी समूहों ने फिलीस्तीनी यहूदी समुदाय के बीच आतंक फैलाना शुरु किया। शिक्षकों को उनके खिलाफ बोलने पर पीटा गया। उन लोगों की हत्या की गई जिन्होंने अपने बच्चों को उनके संगठनों में शामिल होने से रोका।

गैंगस्टरों के तौर-तरीके अपनाते हुए उन्होंने लोगों को डराया-धमकाया, मारा-पीटा, घरों की खिड़कियां तोड़ डालीं, बड़े पैमाने पर डाके डाले और भारी उगाही की। फ्रीडम पार्टी ने फिलीस्तीन में किसी भी तरह के रचनात्मक कार्य में हिस्सा नहीं लिया। उसने न तो कृषि सुधार किए, न ही बस्तियां बसाई। वह यहूदियों की रक्षा संबंधी गतिविधियों से विमुख रही। लोगों को लाकर बसाने का उसका बहुप्रचारित अभियान बहुत मामूली था और वह भी सिर्फ फासीवादी हमवतनों को लाने तक सीमित रहा।

कथनी-करनी में फर्क

बेगिन और उनकी पार्टी द्वारा आज किए जा रहे लंबे-चौड़े दावों और उनके अतीत के क्रियाकलापों के बीच के विरोधाभास से साफ जाहिर होता है कि यह कोई आम राजनीतिक दल नहीं है। उसके सारे लक्षण बताते हैं कि यह एक फासीवादी पार्टी है जो आतंकवाद (यहूदियों, अरब और ब्रिटिश सदृश लोगों के खिलाफ) फैलाती है, तथ्यों को तोड़- मरोड़कर पेश करती है और जिसका लक्ष्य एकाधिकारवादी राज्य कायम करना है। इन सारी बातों को ध्यान में रखते हुए यह जरूरी हो जाता है कि बेगिन और उनके आंदोलन की सच्चाई देश को बताई जाए। यह और भी अधिक दुखद है कि अमेरिकी यहूदीवाद के शीर्ष नेतृत्व ने बेगिन के प्रयासों के विरुद्ध अभियान चलाने से इनकार कर दिया है, यहां तक कि वे अपने ही लोगों को बेगिन के समर्थन के कारण इजरायल पर उत्पन्न संकट के बारे में बताने के लिए तैयार नहीं है।

इसलिए अधोहस्ताक्षरी बेगिन और उनकी पार्टी से संबंधित कुछ मुख्य तथ्यों को सार्वजनिक रूप से प्रस्तुत करने का यह तरीका अपनाते हुए सभी संबंधित पक्षों से फासीवाद के इस नवीनतम उभार का समर्थन न करने का आग्रह करते हैं।

साभार – उदभावना, अंक-133

FREE
PALESTINE
VINCE
SEVEN
Young Abu Amar

मेवाती शायर सादल्ला जिसने मेवाती बोली में लोक महाभारत रचा

जीवन सिंह

आपको यह जानकर खुशी होगी कि जिस नूह में पिछले दिनों सांप्रदायिक दंगे कराये गये उसी इलाके में नूह के नज़दीक आकेड़ा गांव में अठारहवीं सदी में दो बड़े शायर पैदा हुए,एक का नाम है सादल्ला तो दूसरे का नाम है नबी खां। इन दोनों ने महाभारत की कथाएं अपने पूर्वज मीरासियों से सुन सुन कर पूरे मेवाती परिवेश, लहज़े और चरित्रों के अपूर्व संयोजन के साथ लोकगाथा काव्य लिखा —- नाम दिया पंडून कौ कड़ा अर्थात पांडवों की कथा। इसमें पंडून की जन्म पतरी, भींव कौ कड़ा और अरजन कौ कड़ा,सादल्ला ने रचे,जो अधूरी कथा रह गयी , उसकी पूर्ति नबी खां ने बबराबाण कौ कड़ा यानी वभ्रुवाहन की कथा रचकर की।इसके बारे में सादल्ला ने कहा-

पांडून का कड़ा का, ब्रज होली कार्यक्रम (1984) में प्रदर्शन लोक कलाकार।
(फोटो स्वयंभू फाउंडेशन और गफ्फरूद्दी मेवाती जोगी)

Photo Credits: Swayambhu Foundation and Gafruddin Mewati Jogi

सत्तरह सौ सत्तानवे बरस गया हैं बीत।
जानै पंडू अब हुया,याकी कौन करै परतीत।

इसे मीरासियों ने मेवों और मेवात में बसे हिंदुओं के पर्वों, उत्सवों और समारोहों में गा गाकर अमर कर दिया। पहले के शादी विवाहों में बारात तीन दिन रुका करती थी।ऐसा हिंदुओं के यहां ही नहीं, मेवों के यहां भी हुआ करता था। बचपन में मैंने अपने घर में एक रथ देखा है जिसके लिए अलग से ऐसे बैल रखे जाते थे जिनसे रथ में दौड़ने के अलावा कोई अन्य काम नहीं लिया जाता था।हमारा रथ हिंदुओं और मेवों दोनों की बारातों में जाता था,तब रात्रि में मीरासियों का लोक गायन होता था जिसमें वे पंडून के कड़े भी गाकर सुनाते और उसके बदले में इनाम-इकराम पाया करते थे। इनमें से ही ऐसे मीरासी भी निकल आते थे जो स्वयं शायरी करने लगते थे।ये मीरासी चूंकि मेवात के हिंदुओं को भी अपना यजमान मानते थे इसलिए इनके पास सभी तरह की चीजें हुआ करती थी। दोनों समुदायों के हृदयों को लंबे समय तक जोड़कर रखने में इन मीरासियों की बहुत बड़ी भूमिका होती थी।सच तो यह है कि इसी मीरासी समुदाय ने मेवाती लोक संस्कृति को खुद भूखा रहकर रचा है। इनके पास हारमोनियम होते थे जिनसे गा गाकर ये भादों के महीने में हर घर से अनाज मांगकर अपनी आजीविका चलाते थे। चौधरियों, नंबरदारों, जागीरदारों का संरक्षण भी इनको मिला हुआ होता था। किंतु धीरे धीरे यह सब कुछ बंद हो गया इससे हिंदुओं और मेवों की नयी पीढ़ियों का अपने लोकसाहित्य से रिश्ता विच्छेद होता गया।आज दोनों समुदायों की जो नयी पीढ़ियां है उनका स्मृति लोप हो चुका है। इसके विपरीत दोनों ही समुदायों का तेज़ी से संस्कृतीकरण हो रहा है। हिंदू, पहले से ज्यादा हिंदू हो रहा है इसी तरह मेव समुदाय भी पहले से ज्यादा मुसलमान बन रहा है। पूंजीवादी व्यवस्था में जो अलगाव और अजनबीपन होता है वह भी तेज़ी से बढ़ रहा है। तीसरे लोकतंत्र में ध्रुवीकरण का ऐसा खतरा पैदा कर दिया गया है जिससे धर्म संप्रदायों का ही नहीं, जातियों का ध्रुवीकरण करने की प्रक्रिया बहुत तेजी से बढ़ी है। महंगाई, भ्रष्टाचार और बेरोज़गारी की मार ऊपर से निम्न और निम्न मध्यवर्ग पर पड़ ही रही है।ये ऐसे कारक हैं जो समाज में फूटपरस्ती को बढ़ाने का काम करते हैं। बहरहाल, सादल्ला जैसे शायरों का ज़माना आज जैसी संस्कृतिहीनता का जमाना नहीं था।तभी तो उनकी प्रशंसा करते हुए किसी मीरासी शायर ने कहा था — कुछ लोग यह भी मानते हैं कि यह अपने बारे में सादल्ला का ही कथन है -

जंह तक बेद कुरान हैं,हूं तक सादल्ला।
आगे अगम अथाह है,मेरो जानै है अल्लाह।

संपर्क – 9785010072

गुरु रविदास जयंती

जन नाट्य मंच कुरुक्षेत्र द्वारा ओम प्रकाश ग्रेवाल अध्ययन संस्थान में 24 फरवरी 2024 को गुरु रविदास जयंती का आयोजन किया गया। इसमें उनके शबद, वाणियों का गायन किया गया। तथा वर्तमान संदर्भों में गुरु रविदास के दर्शन की प्रासंगिकता पर देसहरियाणा के संपादक सुभाष सैनी ने संबोधित किया।

रविदास जयंती के उपलक्ष्य में
जन नाट्य मंच, कुरुक्षेत्र की विशेष प्रस्तुति
संगीत संध्या और विचार गोष्ठी

गुरु रविदास जयंती पर जन नाट्य मंच कुरुक्षेत्र की प्रस्तुति

पानीपत में माता सावित्री बाई फुले की पुण्यतिथि पर चेतना उत्सव

चेतना परिवार पानीपत द्वारा 10 मार्च 2024 को माता सावित्री बाई फुले जयंती के मौके पर चेतना उत्सव मनाया गया। पिछले 21 सालों से चेतना परिवार कार्यरत है। दीपचन्द निर्मोही जी इसमें केंद्रीय व्यक्ति हैं. उनकी पत्नी कमला निर्मोही ने ये कार्य शुरु किया था। अनेक प्रौढ़ महिलाएँ व लड़कियाँ आत्मनिर्भर हो चुकी हैं. चेतना ने इनकी प्रतिभा व सोच के पंख खोल दिए हैं। महिलाएँ जो पढ़ नहीं सकी अब चेतना स्कूलों में मज़दूरी के बाद पढ़ रही हैं. बच्चे हुनर सीख रहे हैं। इतनी ज़िंदा प्रेरक कहानियाँ सामने से देखने का अद्भुत अनुभव हुआ। देसहरियाणा के संपादक सुभाष सैनी ने इस कार्यक्रम की अध्यक्षता की।

सावित्रीबाई फुले पुण्यतिथि पर परिचर्चा

सत्यशोधक फाउंडेशन व ओमप्रकाश ग्रेवाल अध्ययन संस्थान कुरुक्षेत्र के तत्वावधान में 10 मार्च 2024 सावित्रीबाई फुले और हमारा समाज विषय पर परिचर्चा का आयोजन किया गया। सावित्री बाई के साहित्य, विचार और जीवन संघर्ष पर गंभीर चर्चा हुई।

हरियाणा लेखक मंच का वार्षिक सम्मेलन संपन्न

जयपाल

हरियाणा लेखक मंच का दूसरा वार्षिक सम्मलेन 15 अक्टूबर 2023 को कुरुक्षेत्र में दो सत्रों में आयोजित हुआ। लगभग एक सौ साहित्यकारों की उपस्थिति में पहला विचार-सत्र 'आज के दौर में लेखक के सरोकार' विषय पर केन्द्रित था। विषय-प्रस्तावक डा. कृष्ण कुमार (एसोसिएट प्रोफेसर) ने कहा कि जगत-गति पूँजी से संचालित है, मूल्यों से नहीं। जब तक यह मूल्यों से संचालित नहीं होगी, तब तक लेखक लिखता रहेगा। साहित्य का सरोकार प्रतिरोध में ही निखरता है, तभी वह साहित्य को मनोरंजन और उन्माद में जाने से बचा सकता है। उन्होंने कहा कि साहित्यिक तर्क, विवेक की रक्षा करता है और तर्क को उन्माद में नहीं बदलने देता।

सत्र के मुख्य वक्ता कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय के प्रोफेसर सुभाष चन्द्र ने लेखकों के सामने अनेक सवाल उठाए। उन्होंने कहा कि मनुष्य-निर्माण की परियोजना से लेखक जुड़ा है या नहीं, यह बड़ा सवाल है। क्या मेरा सोचने का तरीका जन-निर्माण योजना का हिस्सा बन सकता है कि नहीं?-लेखकों को सोचना होगा। टॉलस्टॉय की कहानी का उदाहरण देते हुए

डा. सुभाष चन्द्र ने कहा कि आज लेखक बिना पीड़ा के कुछ पैदा करना चाहता है, तो वह पीड़ा का आनंद भी नहीं जान सकता। हमारे सारे सौन्दर्यबोध को अवमूल्यित किया जा रहा है। साहित्य पाठक की। भावनात्मक जरूरतों को पूरा करते हुए उनमें विवेक जगाता है, यह उसकी ताकत है। लेखक का काम सच बोलना, उलझी बात को सुलझाकर पाठक को बताना और विकृति के प्रति सचेत करते हुए पाठक को परिष्कृत करना है। यदि आप मनुष्य हैं, तो उसकी स्वतंत्रता का हनन करने वाले राज्य के खिलाफ पोजीशन लेनी होगी। आज अभिव्यक्ति की आजादी का सवाल सबसे बड़ा सवाल है। अपने परिवेश में से ही लेखक अपनी भूमिका तलाशता है और समाज को देखने और उससे जुड़ाव से ही लेखकीय सरोकार निकलते हैं। अगली पीढ़ी द्वारा साहित्य को ग्रहण करने के टूल्स भी विकसित करने होंगे। हमारे सामने इतना झूठ फैला है कि पाठक को उससे बचाने की भी बड़ी चुनौती है।

सत्र में ओम बनमाली डा. गुरदेव सिंह देव, हरपाल सिंह, कमलेश चौधरी, अनुपमा शर्मा आदि के सवालों का जवाब देते हुए डा. सुभाष चन्द्र ने कहा कि पूँजीवाद ने हमेशा मिथक, झूठ और कर्मकांड को उठाया है। अब लोग अधिकारों के प्रति सचेत होते जा रहे हैं। साहित्य सार्वजनिक हो चुका है, लेखक के लिए अब कोई फरमान जारी करना बेमानी है। छोटे-छोटे हीरो हर गली में मिल जाएँगे, सो लेखन-विषय की खोज के लिए कहीं अलग से भटकने की जरुरत नहीं। जो अपने समय में अप्रासंगिक हो गया या जो लेखक बदल नहीं रहा, उस पर बात करने का कोई लाभ नहीं। सत्र की अध्यक्षता अमृतलाल मदान ने की, संचालन डा. बी मदन मोहन और अजय सिंह राणा का रहा और धन्यवाद जयपाल ने किया.

दूसरे विचार-सत्र में विमर्श का विषय था- 'वर्तमान दौर के लेखन में स्त्री-संघर्ष की अभिव्यक्ति'। सामाजिक कार्यकर्ता, प्रोफेसर मनजीत राठी (रोहतक विश्वविद्यालय) ने कहा कि जीवन में समाज के पटल पर स्त्रियाँ जो मुद्दे उठाती रही हैं, वही उनके संघर्ष और लेखन का भी केंद्र बनते हैं। 'सीमन्तनी उपदेश', बहिनाबाई की आत्मकथा, सुलताना का सपना, श्रृंखला की कड़ियाँ के प्रसंगों आदि के ज़रिए डा. मनजीत ने कहा कि परिवार तथा विवाह संस्था के ढांचों की आलोचना व पुनर्निरीक्षण तथा हिन्दू शास्त्रों को चुनौती 19 वीं सदी के भारतीय नवजागरण काल से ही स्त्री- लेखन का केंद्र रहे हैं।

20वीं सदी में भूख, गरीबी, हिंसा, रूढ़िवाद व रीति-रिवाज़ तथा यौनिकता से जुड़े स्त्री-संघर्ष ने यह स्थापित किया है कि लैंगिक मुद्दों को शामिल किए बिना सामजिक न्याय संभव नहीं। स्त्री-लेखन ने नए व पुराने के बीच टकराव को नए आयाम दिए हैं और नैतिकता की परतें खोलकर रख दी हैं। उन्होंने कहा कि स्त्री के दर्द और अकेलेपन को समझे बिना स्त्री-संघर्ष की बात अधूरी है। स्त्री-संघर्ष एक अधिक मानवीय, न्यायप्रिय और सर्वसमावेशी समाज का निर्माण करता है और व्यापक मानव-मुक्ति के द्वार खोलता है.

सत्र की मुख्य वक्ता, कथाकार प्रोफेसर प्रज्ञा (दिल्ली विश्वविद्यालय) ने कहा कि लेखन का कोई जेंडर नहीं होता, न ही संघर्ष कोई इकहरी इकाई होती है। पितृसत्ता, नैतिकता और परंपरा की अमरबेलें स्त्री-जीवन से हमेशा चिपटी रही हैं। 'कायांतर' (जयश्री राय), 'रेणुका' और 'अलाव' (सुशील टाकभौरे), चार बहनें शीशमहल की' (नासिरा शर्मा) 'स्याह घेरे' (प्रज्ञा), आदि के उद्धरणों द्वारा डा. प्रज्ञा ने स्पष्ट किया कि समानता, सुरक्षा और स्वावलंबन की चाह में स्त्री को सदा भूख, अपमान और शोषण से गुजरना पड़ता है। स्त्री अब पितृसत्ता को चुनौती देने लगी है। लेकिन उसके प्रति पूर्वाग्रह अभी भी बरकरार हैं। उसकी समझ और संघर्ष को कमतर करके देखने की मनोवृत्ति अब भी सक्रिय है। वह देश के प्रधानमन्त्री को तो चुन सकती है, लेकिन जीवनसाथी को नहीं।

ओम बनमाली, कमलेश चौधरी, कुलदीप, दीपक वोहरा, गुरदेव सिंह देव आदि के सवालों का जवाब देते हुए डा.प्रज्ञा ने कहा कि स्त्री-मुक्ति की बात एक यूटोपिया की तरह दिखाई देती है, ऐसा यूटोपिया जिसके लिए समाज आज भी संघर्षरत है। इक्कीसवीं सदी की कहानी स्त्री-रुदन से आगे बढ़कर तर्क से हर विषय पर सशक्त कहानी रच रही है। स्त्री कथाकार साहित्य की उस बाड़ेबंदी का जवाब रच रही है जिसके अनुसार स्त्री-लेखक अपने अनुभवों पर ही अच्छी कहानी लिख सकती हैं।

सत्र के अध्यक्ष डा. रतन सिंह ढिल्लों ने कहा कि हरियाणा में नारी-आन्दोलन को सुधारवादी नहीं, इंकलाबी होना पड़ेगा। संचालन ब्रह्मदत्त शर्मा और राधेश्याम भारतीय ने तथा धन्यवाद मदनलाल मधु ने किया। सम्मेलन में पंकज शर्मा, अरुण कुमार, सतविंदर राणा, अरुण कहरबा, अशोक बैरागी का विशेष योगदान रहा.

इस अवसर पर 'शुभ तारिका' पत्रिका (सं.उर्मि कृष्ण) सहित 'आसमां तेरी मुट्ठी में (रेखा शर्मा), 'बारिश दी बूंदां' (पंजाबी, सुखविंदर मान), 'मौसम रोज़ बिगड़ता है' (स्नेह लता), 'अपने अपने मलाल' (नवरत्न पांडे), 'चाँद अलसाया हुआ हैं' (रोजलीन), 'पछुआ बनी पुरवाई' (अंग्रेजी से अनूदित, दिनेश दधीचि), 'पंटरबाज' (विनोद शर्मा दुर्गेश), 'मनमंच के रंग' (अमृतलाल मदान) ' बाढ़ की त्रासदी' (जय भगवान् सिंगला), महासमर की सहस्रधारा' (हरिश्चंद्र झंडई) पुस्तकों का विमोचन किया गया।

मंच द्वारा आयोजित युवा कविता-लेखन प्रतियोगिता के छह विजेताओं - कमल किशोर, किंशुक गुप्ता, विश्व वर्मा, डिंपल सैनी, गरिमा नंद्वाल, वीरेन्द्र राठौर- को पुरस्कृत किया गया। पुस्तक-प्रदर्शनी भी लगाई गई। मंच के अध्यक्ष कमलेश भारतीय अस्वस्थता के कारण उपस्थित नहीं हो पाए।

संपर्क - 9466610508

गोरी हिरणी-उपन्यास पर परिचर्चा

प्रो.राजीव चंद्र शर्मा

गुलजार सिंह संधु के पंजाबी में लिखित तथा वंदना सुखीजा व गुरबख्श सिंह मोंगा द्वारा हिन्दी में अनुवादित गोरी हिरणी - उपन्यास पर जनवादी लेखक संघ अंबाला तथा प्रगतिशील लेखक संघ अंबाला ने संयुक्त रूप से 7 अप्रैल 2024 को अंबाला छावनी के सिख सीनियर सैकेंडरी स्कूल में एक परिचर्चा आयोजित की।

प्रगतिशील लेखक संघ की ओर से डा. गुरदेव सिंह 'देव' ने आगंतुकों का स्वागत करते हुए अनुवादकों का परिचय देकर उपन्यास की द्वितीय विश्व युद्ध की पृष्ठभूमि पर प्रकाश डाला। जनवादी लेखक संघ की ओर से जयपाल ने अंबाला,चंडीगढ़, बरवाला, डेराबसी, करनाल, कुरुक्षेत्र ,फगवाड़ा, बरनाला आदि से पधारे विशिष्ट अतिथिगण व वक्ताओं का अभिनंदन करते हुए कहा कि मुक्ति अकेले प्राप्त नहीं होती और तटस्थ रहने वालों का भी इतिहास लिखा जाएगा।

उपन्यास की सह अनुवादक वंदना सुखीजा ने अपने संबोधन में कहा कि अनुवाद के माध्यम से हम एक संस्कृति को दूसरी संस्कृति के पास पहुंचा सकते हैं। लेखक गुलजार सिंह संधु ने अपनी कृति में हिटलर के समय के समाज पर प्रभाव, युद्ध की विभीषिका, अति राष्ट्रवाद, नस्लवाद आदि को प्रभावी तरीके से अभिव्यक्त किया है। इस उपन्यास में जर्मनी और भारतीय पंजाब के बहुसांस्कृतिक परिवेश को बखूबी दर्शाया गया है। उपन्यास का अंत परिवार के जुडते हुए आशावाद से होता है। अनुवाद प्रक्रिया का वर्णन करते हुए उन्होंने बताया कि उन्होंने स्वयं तथा दूसरे सह अनुवादक गुरबख्श सिंह मोंगा ने क्रमश: अनुवाद कार्य जारी रखते हुए उसे आगे बढ़ाते हुए सम्पन्न किया।

डेराबस्सी से आए पंजाबी रचनाकार जयपाल ने पंजाब विभाजन, नाजीवाद, फासिज्म, अल्पसंख्यकों पर बहुसंख्यकों के मूल्य थोपने, वैश्विक राजनीतिक तानाशाही, नस्लवाद के शुद्धिकरण के बिंदुओं को गोरी हिरणी के संदर्भ में उजागर किया।

करनाल से पधारे डा अशोक भाटिया ने कहा कि अनुवादक देश-दुनिया में भाषा और संस्कृति ले जाते हैं। गोरी हिरणी का नायक और खलनायक युद्ध है। रचना में युद्ध व घृणा, प्रतिरोध की चेतना इत्यादि का वर्णन है।

डा रत्न सिंह ढिल्लों ने उपन्यास के संदर्भ में ऊंच नीच, स्वास्तिक चिन्ह, हिटलर के अंत, दो सगी बहनों की विचारधारा में भिन्नता, अनाथालयों में बच्चों की दर्दनाक स्थिति, शहरी व ग्रामीण पारिवारिक जीवन में अंतर, संवाद के माध्यमों हुए परिवर्तनों व तकनीक के अनुप्रयोग रेखांकित किए। तलाक को प्रवास के लिए प्रयोग करने पर चिंता प्रकट की।

प्रगतिशील लेखक संघ पंजाब के अध्यक्ष सुरजीत जज ने मुख्य वक्ता की भूमिका में संबोधन करते हुए पेरिस में 1935 में गठित प्रगतिशील लेखक संघ के इतिहास में भारतीयों की भागीदारी पर प्रकाश डाला। उन्होंने कबीर, रविदास, बुद्ध, नानक को प्रगतिशील चिंतक बताया। उन्होंने माना कि गोरी हिरणी में जर्मन और पंजाबी संस्कृति का एक दूसरे पर प्रभाव पड़ा है। उनके अनुसार प्रगतिशील लेखक शब्द शक्ति के हुनर से समाज की लड़ाई लड़ता है। पूंजीपति सेना राष्ट्रवाद से जोड़ता है लेकिन स्वयं सेना में अपने बच्चों को नहीं भेजता। उपन्यास में जानकारी प्रदान करने की बजाए यथार्थ सृजन पर अधिक बल दिया जाता है। गोरी हिरणी में प्रवचन रहित रचना है। पात्रों और घटनाओं जरिए संदेश देती एक कृति है।

इनके अतिरिक्त सुदर्शन गासो, अनुपम शर्मा, गुरदेव सिंह, हरपाल ग़ाफ़िल, हरपाल सिंह पाली, जगमीत सिंह जोश, संतोख सिंह आदि ने भी संक्षिप्त टिप्पणियां की ।

पुस्तक परिचर्चा
गोरी हिरणी
प्रगतिशील लेखक संघ (प्रलेस) अम्बाला
का हार्दिक स्वागत है

देस हरियाणा जुड़ने के लिए संपर्क करें

कुरुक्षेत्र	विकास साल्याण	9050182156
	योगेश शर्मा	9896957994
अंबाला शहर	जयपाल	9466610508
करनाल	अरुण कैहरबा	9466220145
इंद्री	दयालचंद जास्ट	9466220146
घरौंडा	राधेश्याम भारतीय	9315382236
नरेश सैनी		9896207547
कैथल	कुलदीप	9729682692
जीन्द	मंगतराम शास्त्री	9416513872
टोहाना	बलवान सिंह	9466480812
नरवाना	सुरेश कुमार	9416232339
सोनीपत	विरेंद्र वीरू	9467668743
पानीपत	दीपचंद निर्मोही	9813632105
पंचकुला	सुरेंद्र पाल सिंह	9872890401
	जगदीश चन्द्र	9316120057
रोहतक	अविनाश सैनी	9416233992
भिवानी	का. ओमप्रकाश	9992702563
सिरसा	परमानंद शास्त्री	9416921622
हिसार	राजकुमार जांगड़ा	9416509374
महेन्द्रगढ़	अमित मनोज	9416907290
मेवात	सिद्दीक अहमद मेव	9813800164
शिमला	एस आर हरनोट	0177-2625092
		9810171896
राजस्थान (परलीका)	विनोद स्वामी	8949012494
चंडीगढ़		
	पंजाब बुक सेंटर, सैक्टर 22	
दिल्ली	संजना तिवारी, नजदीक श्रीराम सेंटर,	
	आरके मैगजीन, मौरिस नगर, थाने के सामने	
	एनएसडी बुक शॉप	
पीडीएफ के लिए	desharyana.in	